तिरुमल तिरुपति क्षेत्र का माहात्म्य

हिंदी अनुवाद

डॉ. पुट्टपर्ती नागपद्मिनी

तेलुगु मूल

श्री. जी. टी. सूरी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2024

TIRUMALA TIRUPATI KSHETRA KA MAHATMYA

Hindi Translation
Dr. Puttaparthy Nagapadmini

Telugu Original
Sri. G. T. Suri

Editor
Dr. Akella Vibhishana Sarma
Special Officer
Publications Division

T.T.D. Religious Publications Series No. 1479
© All Rights Reserved

First Edition : 2024
Copies : 500

Published by
Sri J. Syamala Rao, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati - 517 507.

DTP
Publications Division,
T.T.D, Tirupati.

Printed at
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati - 517 507.

प्रस्तावना

''वेंकटाद्रिसमम् स्थानम् ब्रह्मांडे नास्ति किंचन
वेंकटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।।''

इसका अर्थ है - वेंकटाद्रि के समान क्षेत्र इस ब्रह्मांड में नहीं है। वेंकटेश्वर जी की बराबरी कर सकनेवाले भगवान भी आज तक कहीं नहीं हुए हैं और आगे भी नहीं होंगे।

पुराणों के अनुसार वेंकटाचल पर श्रीनिवास के हृदयालय पर लक्ष्मी देवी तथा पद्मावती दोनों विराजमान हैं। संसार भर के भक्त तिरुमल यात्रा पर भगवान बालाजी के दर्शनार्थ आते रहते हैं। तिरुमल क्षेत्र तथा वहाँ के तीर्थों के दर्शन कर भक्तगण तिरुपति वापस आकर दो - तीन दिन वहीं ठहरकर आसपास के दर्शनीय स्थलों के दर्शन कर वापस जाते हैं। माना जाता है कि इस कलियुग की प्रजा के कष्टों को दूर कर, उनका तारण करने के लिए ही महाविष्णु वैकुंठ को छोड़कर, इस वेंकटाचल पर, आनंदनिलय दिव्य विमान के नीचे विराजमान हैं। इसी कारण तिरुमल, भूलोक वैकुंठ के नाम से अभिहित हो रहा है। कलियुग को पापों का कूप माना जाता है। भक्तों की रक्षा में तत्पर वैकुंठवासी भगवान विष्णु, प्रजा को कलियुग की बाधाओं से बचाने के लिए वेंकटाचल पर्वत पर अवतरित हो भक्तों को अभय प्रदान कर रहे हैं।

कलियुग वैंकुठ के रूप में वेंकटाचल पर्वत पर लोक कल्याणार्थ अवतरित बालाजी की महिमा एवं तिरुमल तिरुपति क्षेत्र के माहात्म्य के संबंध में सुधी पाठकों की ज्ञान वृद्धि के लिए अनेकानेक शास्त्रों एवं पुराणों के आधार पर श्री जी. टी. सूरी ने **'तिरुमल तिरुपति क्षेत्र का माहात्म्य'** नामक पुस्तक की रचना की। इस रचना का हिंदी

भाषा में अनुवाद करने का महत्तर कार्य डॉ. (श्रीमती) पुट्टपर्ती नागपद्मिनी ने किया।

इस रचना में तिरुमल पुण्य क्षेत्र के अस्तित्व, श्री वेंकटाचल की महत्ता, वेंकटाचल के दिव्य तीर्थ, क्षेत्र तीर्थों की आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही श्री वेंकटाचलपति का आविर्भाव कैसे हुआ? पद्मावती का जन्म वृत्तांत, पद्मावती का श्रीनिवास से मिलना, विवाहार्थ श्रीनिवास का कुबेर से उधार लेना, पद्मावती, श्रीनिवास का विवाह, श्रीनिवास के आज्ञानुसार तोंडमान द्वारा मंदिर का निर्माण आदि की चर्चा भी की गई है।

हमें पूरा विश्वास है कि भक्तगण इस ग्रंथ की मदद से तिरुमल तिरुपति क्षेत्र के माहात्म्य एवं वेंकटाचलपति के आविर्भाव से लेकर उनके विवाह, मंदिर निर्माण आदि की भी विस्तृत जानकारी पाते हुए धन्य बनेंगे।

इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद करने के लिए डॉ. (श्रीमती) पुट्टपर्ती नागपद्मिनी को हृदय से धन्यवाद।

इस रचना को अनुवाद के लिए चुनने के लिए विशेष अधिकारी डॉ. आकेल्ल विभीषण शर्म, प्रकाशन विभाग, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति को अभिनंदन।

सदा श्रीहरि की सेवा में,

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

दो शब्द

भारत कृतेतु नारसिम्हाऽभूत्त्रेतायाम् रघुनंदनः
द्वापरे वासुदेवश्च कलौ वेङ्कट नायकः

अर्थात कृत युग में नरसिंह मूर्ति, त्रेता युग में दशरथ राम, द्वापर में वासुदेव तथा इस कलियुग में श्री वेंकटेश्वर प्रत्यक्ष देवता हैं।

दुनिया भर में श्री वेंकटेश्वर स्वामी तथा तिरुमल क्षेत्र अत्यंत विशिष्ट स्थान रखते हैं। माना जाता है कि कलियुग में जनता अधिकतया भोगवांछा की मृग तृष्णा के पीछे दौड़ते-दौड़ते भगवन्नाम को भूल-सी जाती है। इस भोगदौड़ में हर मनुष्य अनेकानेक पाप करने में भी झिझकता ही नहीं है। महर्षियों ने कहा कि कलियुग में भक्ति तथा श्रद्धा से यज्ञ यागों को करने की आवश्यकता भी नहीं है। मात्र 'नामस्मरणाधन्योपायम् नहि पश्यामो भवतरणे' भगवान के नाम स्मरण मात्र से पाप सभी मिट जाते हैं। लेकिन कलियुग के लक्षणों को भरपूर अपनाते मानव को देखकर परम कृपालु भगवान विष्णु ने निर्णय ले लिया कि स्वयं भूलोक पर अर्चावतार के रूप में कलियुगांत तक रहते हुए मानव को इस कलि मल से बचाएँ।

श्री वैकुण्ठ विरक्ताय स्वामी पुष्करिणी तटे
रमया रममाणाय वेङ्कटेशाय मङ्गलम्

अपने निवास स्थान के रूप में उन्होंने श्री वेंकटाद्रि को चुना। जब भगवान स्वयं निर्णय ले लेते हैं तो सब प्रबंध अपने आप जल्दी हो जाते हैं। आखिर यह संसार ही उस परमात्मा की लीला का क्षेत्र है। उनके इस निर्णय के पीछे त्रेता युग तथा द्वापर युग के उनके ही वचन माने जाते हैं। त्रेतायुग की वेदवती कलियुग में पद्मावती बनीं तथा द्वापर की यशोदा कलियुग की वकुल माता बनीं। आकाश राज की पुत्री पद्मावती (वेदवती) से उनका विवाह हुआ। वकुलम्मा का जीवन धन्य है, जिसने इस जन्म में कलियुग के स्वामी श्री वेंकटेश्वर

की माता के रूप में अपने वात्सल्य प्रेम का भरपूर आनंद उठाया। तिरुमल शिखरों पर वराह स्वामी की अनुमति लेने के बाद आनंद निलय श्री वेंकटेश्वर स्वामी का निवास स्थान हो गया। साक्षात ब्रह्मा जी के द्वारा सर्वप्रथम आयोजित ब्रह्मोत्सवों का आयोजन आज अबाध गति से हो ही रहा है। उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम - भारत के कोने-कोने से अशेष भक्त वाहिनी, इन दिव्य-भव्य उत्सवों का आनंद उठाने के लिए आज भी आती है। तिरुमल गिरियों को पैदल चढ़कर श्री वेंकटेश्वर के सामने अपनी मनोवांछाओं को प्रकट कर मन्नत मांगने वाले अनगिनत भक्त भी हैं। उन मनोकामनाओं की पूर्ति के बाद पुनर्दर्शन की कांक्षा भी वे व्यक्त करते हैं। भगवान को अनेक उपहार भी चढ़ाते हैं। भगवान श्री वेंकटेश्वर की भक्ति में परवशित ह्रदयों से कई अनुभवों के परिमल को अपने साथ ले वापस चलते हैं। भगवान के सामने अमीर गरीब का भेद बिलकुल नहीं है। सब उनके दर्शन पाने के हकदार हैं। दूर दराज प्रांतों से आये हुए वे भक्त जन, आनंद निलय स्वामी के क्षण मात्र दर्शन से ही अपने को धन्य मानते हैं। उस क्षण में पता नहीं कौन-सा चमत्कार हो जाता है कि मंदिर से बाहर आने के दूसरे क्षण से ही उनमें भगवान की पुनर्दर्शनाकांक्षा जाग उठती है। यही इस पावन क्षेत्र का माहात्म्य है। ये सारे अनुभव अनुभवैक वेद्य हैं, बस! इस तरह तिरुमल क्षेत्र में श्री वेंकटेश्वर आज भी कलियुग के एकमात्र देवता सिद्ध हो रहे हैं।

सुधी पाठकों की ज्ञान वृद्धि तथा सुविधा के लिए एवं तिरुमल क्षेत्र के माहात्म्य पर अनेकानेक शास्त्रों एवं पुराणों के आधार पर लिखी गयी इस रचना में तिरुमल क्षेत्र की महत्ता अत्यंत श्रद्धा से उल्लिखित है। इसके अलावा स्वयं तिरुमल से सम्बन्धित सभी तीर्थों तथा क्षेत्रों का दर्शन कर, वहाँ के यात्रियों के स्वानुभवों को भी दृष्टि में रखते हुए श्री जी. टी. सूरी जी ने 'तिरुमल तिरुपति क्षेत्र का

माहात्म्य' नामक इस ग्रन्थ की रचना तेलुगु में की थी। इस भव्य रचना का प्रकाशन सन् 2000 और सन् 2004 में देवस्थानम् के द्वारा ही हुआ था। एतदर्थ उन्हें हमारी बधाईयाँ समर्पित हैं।

वार्षिकोत्सव, मासोत्सव, दैनंदिन उत्सवों के साथ श्री वेंकटेश्वर स्वामी की लीलाएँ भी दिन-ब-दिन जनता को आकृष्ट कर रही हैं। इस कारण प्रजा को श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रति आस्था बढ़ने लगी। आज भगवान वेंकटेश्वर के भक्त विश्व भर में व्याप्त हैं। तिरुमल क्षेत्र के सम्पूर्ण इतिहास को जानने की उत्सुकता दिन-ब-दिन बढ़ रही है।

भगवान श्री वेंकटेश्वर की पूजा - सेवाओं के आयोजन के साथ योजनाबद्ध रूप में तिरुमल क्षेत्र की प्रशस्ति से सम्बन्धित रचनाओं का प्रकाशन, तिरुमल तिरुपति से सम्बन्धित देवस्थानम् कई सालों से करता आ रहा है। इसी क्रम में तिरुमल क्षेत्र से सम्बन्धित रचनाओं का राष्ट्र भाषा के गौरव से सम्मानित हिंदी में अनुवाद करवाकर, उन राज्यों तक पहुँचाना तद्वारा कलियुग के प्रत्यक्ष देवता श्री वेंकटेश्वर की कृपा का अधिकारी बनने का अवसर उत्तर भारत को भी देने के उत्तरदायित्व को भी गत कई वत्सरों से देवस्थानम् सक्षम रीति से निभाता आ रहा है। इसी क्रम में तिरुमल क्षेत्र के माहात्म्य से सम्बंधित श्रीमान सूरी जी महोदय की इस रचना का हिंदी अनुवाद प्रकाशित करने का निर्णय देवस्थानम् ने लिया। इसका सुन्दर तथा साधिकार अनुवाद करने हेतु डॉ. (श्रीमती) पुट्टपर्ती नागपद्मिनी महोदया को हमारा साधुवाद।

आशा करते हैं कि हमारे इस प्रकाशन को यथावत पाठकों का आदर मिलेगा।

ऊँ नमो वेङ्कटेशाय

आमुख

श्री कालहस्तीश्वर की कृपा से उस क्षेत्र की महिमा से सम्बंधित मेरी रचना को अत्यंत आदर सम्मान मिलने के बाद मेरे मित्रों ने मुझे सलाह दी कि तिरुमल क्षेत्र की महत्ता के बारे में भी इसी तरह की रचना करो। इसे तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी का आदेश मानकर मैंने इस रचना का श्रीगणेश किया।

तिरुमल तथा तिरुपति में कुछ दिन रहकर, तिरुमल के प्रमुख तीर्थों का भी दर्शन मैंने किया। यात्रियों से मिलकर उनके अनुभवों को सुनते समय उनमें से कुछ लोगों ने कहा कि वेंकटाचल का इतिहास, पद्मावती तायार की कथा, वकुलम्मा का मातृ प्रेम इत्यादि विषयों के बारे में अधिक जानकारी उन्हें चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि तिरुमल के इतिहास के बारे में तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् द्वारा प्रकाशित श्री वेंकटाचल माहात्म्य तथा स्वामी चिन्मयानन्द विरचित वेंकटेश्वर स्वामी की चित्र कथा के सिवा अन्य कोई ग्रन्थ ही नहीं हैं। इसे सुनते ही मैं तुरंत इस काम में जुट गया। वराह पुराण, भविष्योत्तर पुराण, स्कान्द पुराणों में वैष्णव कांडों को पढ़कर, उनमें उल्लिखित मुख्य अंशों को मैंने ग्रहण किया। हमारे पूर्वजों के कथनों के आधार पर, यात्रियों की आवश्यकताओं के अनुसार मैंने इसकी रचना की।

आनंदनिलय में अर्चावतार के रूप में विराजमान स्वामी श्री वेंकटेश अपने हृदय तल पर लक्ष्मी पद्मावती - दोनों को धरते हैं। यात्रियों को पहले तिरुपति के कपिल तीर्थ में नहाकर, कपिलेश्वर स्वामी का दर्शन कर लेने के बाद ही वेंकटाचल पर जाना यहाँ का सम्प्रदाय है। वहाँ भी पहले पुष्करिणी में नहाकर वराह स्वामी के दर्शन कर लेने के बाद ही श्री वेंकटेश स्वामी की सन्निधि में जाने का नियम

है। इन सभी विषयों पर प्रकाश डालते हुए जन श्रुतियों को भी जोड़ते हुए यात्रियों को तृप्त करने की दिशा में मेरी इस रचना को मैंने अक्षरबद्ध किया।

रचना के लिए आवश्यक संस्कृत ग्रंथों को देने के साथ, यत्र तत्र आवश्यक सूचनाओं को देने हेतु सुविख्यात प्रवचनकार तथा न्याय मूर्ति, श्री जी. वि. नरसिम्हा राव जी को मेरा विनय नमन समर्पित है। इस रचना को प्रकाशित करने का श्रेय तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् का है। एतदर्थ देवस्थानम् के कार्य निर्वाहणाधिकारी महोदय को आभार प्रकट करना चाहूँगा।

ऊँ नमो वेंकटेशाय

सुधी विधेय

जी. टी. सूरी

1. प्रस्ताव

तिरुमल तिरुपति क्षेत्र भारत देश का मकुटायमान पुण्य क्षेत्र है। कोटि सूर्यों से समता रखने वाली सप्त गिरियाँ ज्ञान की भी ज्योतियाँ मानी जाती हैं। इन ज्योतियों के प्रकाश से विश्व की प्रजा आकर्षित हो रही है तथा इनकी महिमा से ही प्रजा की मनोवांछाएँ भी पूरी हो रही हैं। इस कारण तिरुमल दिव्य क्षेत्र के रूप में गौरवान्वित हो रहा है। 'तिरु' शब्द के अर्थ हैं - श्रीप्रद, श्रीकर, श्रीयुत। श्री शब्द का अर्थ मात्र ऐश्वर्य ही नहीं बुद्धि, वृद्धि तथा शोभा भी है। तिरुमल तमिल भाषा का शब्द होते हुए भी संस्कृत के अनुसार इसका अर्थ है - श्री प्रद होने वाला पहाड़ (वेंकटाचल)। इसी अर्थ में सदियों से इसकी ख्याति व्याप्त है।

वें = पापों को, कट = हरने वाला = पापों को हरने वाला क्षेत्र। इस अर्थ में सुविख्यात यह क्षेत्र कलि युग के देवता, श्री वेंकटेश्वर का निवास स्थान है। (तिरुपवित्र; पति - स्वामी) तिरुपति वैष्णव क्षेत्र है। तिरुपति में गोविन्दराज स्वामी का मंदिर, श्री कोदंडा रामस्वामी का मंदिर - ये दोनों प्रशस्त हैं। तिरुपति के नजदीक तिरुचानूर है जहाँ पद्मावती तायार का दिव्य धाम शांति निलय है। कहा जाता है कि कुल मिलाकर एक सौ आठ पवित्र तिरुपतियाँ हैं। लेकिन सब में से श्रेष्ठ तिरुमल तिरुपति क्षेत्र ही है। इसी कारण भारत देश के कोने-कोने से भक्तजन, इस पावन क्षेत्र के दर्शन के लिए आते ही रहते हैं तथा स्वामी के दिव्य दर्शन के बाद अपने को धन्य - भाग समझते भी हैं।

वेंकटाचल के मंदिर के शिला फलकों में उपलब्ध पुराने शासनों के द्वारा, इस मंदिर के निर्माण से सम्बंधित अनेक विषय प्राप्त होते

हैं। नारायण पुरम का राजा आकाश राजू तथा उसका भाई तोंडमान के नाम प्रथम गण्य हैं। तदनन्तर चोल राजाओं तथा विजय नगर राजाओं के शासन काल के बाद चन्द्र गिरी का राजा वेङ्कटपति रायलु का नाम विख्यात है। बाद में महन्त समुदाय के काल में वेंकटचलपति के मंदिरों का निर्माण, नित्य कैंकर्य, उत्सवादियों के निर्वाह के साथ दर्शन के लिए आनेवाले भक्तों के लिए सुविधाओं के भव्य प्रबंध भी किये गए।

महंतों में हत्तीराम भावा जी श्री वेंकटेश स्वामी के अनन्य भक्त थे। कहा जाता है कि श्री वेंकटेश्वर स्वामी उनसे बातचीत भी किया करते थे तथा उनके साथ पासा भी खेला करते थे। इन जन श्रुतियों को सुनकर अंग्रेजों के ज़माने में इन बातों की सच्चाई को जानने के लिए हत्तीराम भावा जी को एक कमरे में कैद कर रखा गया और कमरे में बहुत सारे गन्ने के बंडल रखे गए। आज्ञा दी गयी कि सुबह तक इन सारे बंडलों को आपको खाना होगा। आश्चर्य! रातों रात श्री वेंकटचलपति ने उस कमरे में प्रवेश कर, स्वयं एक हाथी बनकर, उन सारे गन्ने के बंडलों को खा लिया और अपने भक्त को उन्होंने विजेता बनाया। कहा जाता है कि इस घटना को देखकर अंग्रेज प्रभुता की आँखें खुली और भावा जी के हाथों मंदिर के निर्वाह छोड़कर लौट गयी। इसके बाद 1933 से लेकर तत्कालीन सरकार के अनुसार तिरुमल के निर्वाह के लिए अलग से प्रबंधों की परिकल्पना की गयी जिसमें पालन शाखा, कार्य निर्वाहणाधिकारी आदि नियमित होते गए। देखते-देखते तिरुमल क्षेत्र विश्व विख्यात हो गया तथा स्वामी की हुंडी की आमदनी भी बढ़ती गयी।

1943 में आंध्र प्रदेश राज्य की स्थापना से लेकर आज तक तत्कालीन राज्य सरकार तथा विविध कार्य निर्वाहणाधिकारियों की अंकित सेवा भाव के कारण श्री वेंकटेश्वर की ख्याति तथा महिमा दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही है। हुंडी की आमदनी को भक्तों के लिए आवश्यक सुविधाओं की परिकल्पना में खर्च किया जा रहा है। इस तरह तिरुमल क्षेत्र में यात्रियों के लिए अत्यंत अद्भुत सुविधाओं को उपयोग में लाते रहने के कारण, आज देश विदेशों से भी अनेक यात्री तिरुमल श्री वेंकटेश के दर्शन के लिए हर दिन आ रहे हैं जैसे नित्यान्न दान, दर्शन के लिए आये हुए भक्तों के लिए प्रतीक्षा स्थल, दर्शनार्थ आकर, घंटों क्यू में खड़े दूर दराज प्रांतों के भक्तों, बच्चों तथा वरिष्ठ नागरिकों के लिए मुफ्त में खाना आदि। इसके अलावा विविध रोगों के निदान के लिए चिकित्सालय, भारतीय संस्कृति के विस्तार के लिए वेद पाठशालाएँ, दृश्य श्रवण माध्यम से धर्म का प्रचार-प्रसार आदि कार्यक्रम भी संपन्न हो रहे हैं। दैनिक, मासिक तथा वार्षिक ब्रह्मोत्सवों का निर्वाह तो सदा सराहनीय ही है। सुप्रभात सेवा, कल्याणोत्सव, वसंतोत्सव, सहस्र दीपोत्सव, एकांत सेवा आदि अनेकानेक सेवाओं में लाखों भक्त भाग लेकर भगवान वेंकटेश्वर को अपनी भक्ति तथा श्रद्धा के अनुसार सेवा समर्पित कर रहे हैं तथा स्वामी की दया के पात्र हो रहे हैं।

* * *

2. क्षेत्र का अस्तित्व

तिरुमल पुण्य क्षेत्र को अब तिरुपति जिले के नाम से जाना जाता है। श्रीकालाहस्ती उसी जिले का एक और बड़ा तीर्थस्थल है। पहले के कवियों ने कई कविताओं में इन दोनों का बखूबी जिक्र किया है। तरिगोंडा वेंगमांबा ने वेंकटाचल के माहात्य को काव्य के रूप में तेलुगु में लिखा। इसके बहुत पहले ही सुवर्ण मुखी नदी की पवित्रता के बारे में श्रीनाथ महाकवि ने अपने काव्य श्री कालहस्तीश्वर माहात्म्य में लिखा।

तिरुपति जाने के लिए बस, रेल तथा विमान जैसे अनेकानेक मार्ग हैं। बेजवाड़ा, गूडूरु, रेनिगुंटा जंक्शन, धर्मावरं - पाकाला जंक्शन, चेन्नै, अरकोणम आदि प्रांतों से रेल मार्ग के द्वारा पहुँच सकते हैं। गूडूरु, रेनिगुंटा और पाकाला जंक्शनों से, देवस्थानम बसें यात्रियों को सीधे तिरुमल ले जाती हैं। इस प्रकार देवस्थानम सीधे तिरुमल पहुँचने वाले तीर्थयात्रियों के लिए उपयुक्त आवास प्रदान कर रहा है। दिल्ली, कोलकत्ता, मुंबई, हैदराबाद, बेंगलुरु और चेन्नई से उड़ान की सुविधा भी है। पश्चिम बंगाल, कश्मीर, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, गुजरात, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल राज्यों के भक्तों को आंध्र प्रदेश में तिरुमल तिरुपति की तीर्थ यात्रा करते देखा जा सकता है। तिरुमल क्षेत्र आने वाले भक्तों के लिए, तिरुपति में रेलवे स्टेशन के पास सभी सुविधाओं से युक्त बड़ी-बड़ी सरायें हैं। मंदिर अधिकारी तीर्थयात्रियों को पर्याप्त सहायता प्रदान कर रहे हैं। उन सरायों से तिरुमल जाने के लिए बस की व्यवस्था है। पहाड़ी पर भी तीर्थयात्रियों

के लिए विभिन्न सुविधाएँ हैं। जो लोग लंबे समय तक पहाड़ी पर रहना चाहते हैं, उनके लिए यहाँ कम लागत वाली, अच्छी तरह से सुसज्जित कॉटेज और उनकी आवश्यकता के अनुसार अतिथि कमरे उपलब्ध हैं। तिरुमल क्षेत्र वैकुंठ पुरम है। आनंद निलय उस शहर की मुख्य इमारत है। आनंद निलय दिव्य विमान के उत्तर-पश्चिम कोने में भगवान हनुमान की मूर्ति के पास खड़े होकर, भगवान वेंकटेश्वर स्वामी के विमान का दर्शन करने के लिए उत्सुक भक्तों की भक्ति का वर्णन करने के लिए शब्द पर्याप्त नहीं हैं। यहाँ तक कि एक नास्तिक भी, भक्तों के उस समूह को देखे, तो एक पल के लिए रुक जाता है। अपने हाथ जोड़ भगवान विमान वेंकटेश्वर को प्रणाम कर, आस्तिक बन, गर्भगृह में श्री वेंकटेश्वर के दर्शन कर, बड़ी भक्ति के साथ तीर्थ प्रसाद प्राप्त करता है। वह अपने को धन्य अनुभव करता है। ध्वजस्तंभ के सामने साष्टांग प्रणाम करता है और खुशी के आंसू बहाता है। वह ध्वजस्तंभ के शीर्ष भाग को देखते हुए नमस्कार कर, शांत मन से चला जाता है। ऐसे दृश्य देखेंगे तो आपको इस क्षेत्र की महिमा समझ में आएगी।

कश्मीर से कन्याकुमारी तक, पश्चिम बंगाल से महाराष्ट्र, गुजरात तक के सुविशाल भारत देश से हर दिन यात्री रेल, बस या विमान के द्वारा तिरुमल तिरुपति पहुँचकर, श्रीवारु का पावन दर्शन कर, धन्य भाग हो जा रहे हैं। भगवान वेंकटेश्वर को केश समर्पित करनेवालों के लिए आवश्यक प्रबंध भी तिरुमल पर किये गए हैं। भगवान को अपने केश समर्पित कर स्वामी पुष्करिणी में या आवश्यक राशि देकर गरम पानी से कमरों में नहाने के बाद, भक्त जन मंदिर के आवरण की परिक्रमा करने के क्रम में वायव्य दिशा पर

स्थित वराह स्वामी का दर्शन पहले कर लेते हैं। बाद में ही बालाजी के दर्शन के लिए चले जाते हैं। यही क्रम सदियों से जारी है। (आगे इसका सम्पूर्ण विवरण दिया जाएगा।) इस तरह स्वामी का दिव्य दर्शन कर लेने के बाद एक दो दिन और वहीं रहकर गोगर्भ, आकाश गंगा, पाप नाशनादि दिव्य तीर्थों में स्नान कर संतृप्त होते हैं तथा तीर्थ क्षेत्र में अपने पापों को मिटा कर स्वामी की दया को पाकर आनंद पाते हैं। यह परम्परानुगत अनुभव है।

भारत एक आध्यात्मिक देश है। भगवान के अनेकानेक अवतारों की निधि है। वेद वेदाङ्गादि अनेक शास्त्रों को विभाजित कर रचे हुए महर्षियों की जन्मभूमि है। योगियों तथा सिद्धों की अपनी भूमि है। अनेक नाटक, काव्यादियों को रचे महा कवियों एवं मनीषियों की है। आर्यों की संस्कृति तथा पवित्र सम्प्रदायों का उत्सव धरोहर है। उन-उन समयों की प्रजा के मनोभावों के अनुसार तत्व शास्त्र का उपदेश कर, उन्हें सन्मार्गों पर चलाने, आध्यात्मिकता को सिखाने, सर्व मानवतावाद का सार बताकर उन्हें विश्व कल्याण प्रेमी बनाये हुए श्री शंकर, रामानुज तथा मध्वाचार्य जैसे सुधी पुत्रों की मातृभूमि है - यह भारत माता! पैसिफिक महासागर जैसे अगाध हैंदव धर्मों का यह महासागर है।

कुरु पांडवों के इतिहास के कारण अष्टादश अध्यायों के महाभारत इतिहास का आविष्कार यहाँ हुआ। सर्व धर्मों का सार भगवद्गीता उसी की देन है जो विश्व के अनेकानेक भाषाओं में अनूदित होकर उनसे स्वीकृत भी है तथा भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन की उत्कृष्टता को दर्शा रहा है। मानव के लिए आवश्यक

आध्यात्मिक ज्ञान की भिक्षा देनेवाले अनेक दिव्य क्षेत्र एवं तीर्थ इस देश में हैं। ये सब अगाध हैन्दव संस्कृति की महत्ता को युग युगों से घोषित कर ही रहे हैं। उन-उन युगों के धर्मानुसार, इतिहास कई तरह बदलते रहने के बाद भी इक्षु खंड की तरह उनकी मिठास कम नहीं हो रही है। इसकी सर्व लोक कल्याण की भावना के कारण ही जात पांत से परे, सभी भक्त समुदाय, इस भूलोक वैकुण्ठ, तिरुमल क्षेत्र का पावन दर्शन करने के लिए तत्पर हो, अनुदिन आते ही रहते हैं।

तिरुमल क्षेत्र तथा वहाँ के तीर्थों के पावन दर्शन के बाद, भक्त जन, तिरुपती वापस आकर और दो तीन दिन अपनी सुविधानुसार ठहरते हैं। वहाँ के गोविन्द राज स्वामी मंदिर, तिरुचानूर में पद्मावती तायार, मंगापुरम में कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी, नागुलापुरम के वेद नारायण स्वामी, नारायण वन में नव विवाहित श्री वेंकटेश्वर दम्पति के भी दर्शन कर, उन-उन क्षेत्रों की विशिष्टता का अनुभव भी करते हैं।

चाहे कितनी भी मुसीबतों का सामना करना पडे, चाहे कितनी भी गरीबी में दिन गुजारे, चाहे कितने ही वैभवों को भोगें, जीवन की चरम दशा में पुत्र, पौत्र, धन, धान्यादि सम्पदाओं से अधिक श्रेष्ठ तथा आत्मा के साथ, परलोकों में भी साथ देनेवाली सम्पदा आध्यात्मिक ज्ञान सम्पदा ही है। इस ज्ञान सम्पदा को पाने के मार्ग हैं - क्षेत्र तीर्थ दर्शन, सज्जनों का साथ, परमात्मा की चिंता तथा शांतियुत जीवन।

इस साधन संपत्ति को प्रदान करने वाले देवताओं में तिरुमल तिरुपति क्षेत्र के स्वामी श्री वेंकटाचलपती सर्वोन्नत हैं। इस कलियुग की प्रजा के कष्टों को दूरकर, उनका तारण करने के लिए ही

महाविष्णु वैकुण्ठ को छोड़कर, इस वेंकटाचल पर, आनंदनिलय दिव्य विमान के नीचे विराजमान हैं। इसी कारण तिरुमल, भूलोक वैकुण्ठ नाम से अभिहित हो रहा है।

कृते तु नरसिंहोऽभू त्रेतायां रघुनंदनः
द्वापरे वासुदेवश्च कलौ वेङ्कट नायकः

उक्त श्लोक का अर्थ यही है। पुराणों में वेंकटेश्वर माहात्य प्रसिद्ध है ही। अब भी भगवान वेंकटेश्वर उसी तरह अनेकों पर दया की वर्षा कर ही रहे हैं जो अक्षरशः सत्य है।

बड़ों का मानना है कि कलियुग में धर्म एक ही पाँव पर चलता फिरता है। पापों का कूप होने के कारण इस युग में रीति, नीति, धर्म, सत्य, दया दाक्षिण्यादि गुण अदृश्य हो जाते हैं। इन सबके विपरीत, लोग काम क्रोधादियों के शिकार हो जाते हैं। वेंकटाचल माहात्म्य की प्रस्तावना के अनुसार भक्तों की रक्षा में तत्पर वैकुंठवासी भगवान विष्णु, प्रजा को कलियुग की बाधाओं से बचाना चाहते हैं। अपने इस विचार के कार्य कारणों की सृष्टि करने हेतु श्री वैकुण्ठ नगरी के अपने भवन में अपनी अर्धांगिनी लक्ष्मी देवी के साथ एकांत में शेष तल्प पर झूला झूलते हुए योग निद्रा में सोच रहे थे। नारद के उपदेशानुसार त्रिमूर्तियों में मुक्ति दाता तथा सत्व गुण संपन्न देवता को अपनी विलक्षण परीक्षा के द्वारा पहचानने के लिए उसी समय भृगु महर्षि वैकुण्ठ में प्रवेश करते हैं।

* * *

3. श्री वेंकटाचल माहात्म्य

(कथा सारांश)

कृते वृषाद्रिम् वक्ष्यन्ति त्रेतायाम् अंजनाचलम्
द्वापरे शेष शैलम् तु, कलौ श्री वेंकटाचलम
नामानि युग भेदेन शैलस्यास्य भवन्ति हि

वेंकटाचल का यह वृत्तांत, वराह पुराण एवं भविष्योत्तर पुराणादियों में वर्णित है। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि ये सभी पुराण मानवों के जीवनों को सुखमय बनाने के लिए ही लिखे गये हैं। कलिकाल के आकर्षणों से ये मानव को बचाते हैं। मनु आदि बहुत सारे महानुभावों ने धर्मानुसार इस पुण्य भूमि का शासन किया था। ये सभी पुराण इसी कीर्ति की रक्षा करने हेतु उपयुक्त संस्कारों को विदित करानेवाले स्वच्छ दर्पण हैं। सूत महर्षि पुराणों के महान ज्ञाता थे। वेद वेदांगादि सम्पूर्ण शास्त्रों की व्याख्या करनेवाले महामहोपाध्याय थे। मानव के कल्याण के लिए उन्होंने शौनकादि महाऋषियों को पुराण की गाथाओं को सुनाने के बहाने हमें ज्ञानोदय प्रदान किया। ऐसे माहात्माओं के लिए सारा विश्व उनका ही परिवार होता है न? उस परिवार की रक्षा ही उनका लक्ष्य होता है। इसी की सिद्धि के लिए उन्होंने अनेक पुराण, काव्य, नाटकादियों की रचना की थी।

कृत, त्रेता, द्वापर, कलि युगों के 43,20,000 के परिमाण के वत्सर, एक महान युग माने जाते हैं। उन-उन युगों में वैकुण्ठ से भूलोक पर गरुड़ जी द्वारा लाया गया पर्वत क्रीडाद्रि के ही अन्य नाम हैं वृषभाद्रि, अंजनाद्रि, शेषाद्रि, वेंकटाद्रि एवं गरुडाद्रि।

इस कलि युग में वृषभाद्रि ही वृषाचल के नाम से अभिहित हो रहा है।

वृषभाद्रि का वृत्तांत

लीला में दिलचस्पी रखने वाले सृष्टि के सूत्रधार, भगवान विष्णु अपने आनंद के लिए वैकुण्ठ के महा मेरु का पुत्र क्रीडाद्री का निर्माण, अनेकानेक पेड़ों, सकल पुष्प लतिकाओं, झीलों और जलाशयों के साथ किया। वह पहाड़ कई जंतुओं का भी निवास स्थान हो गया। कोयल आदि विविध पंछियों के कलकलनाद तथा मोरों के नाट्य से आनंद दायक होने लगा। उन-उन ऋतुओं के अनुसार वह परबत सुमन फलादियों से शोभायमान रहता था।

विविध सुगंधों से सम्मिलित वहाँ की हवाओं से खुश होकर महा विष्णु अपनी पत्नी लक्ष्मी देवी के साथ उस पर्वत पर सानंद विहार करते थे। दम्पति के महादानन्द के कारण क्रीडाद्रि का दूसरा नाम आनन्दाद्री भी हो गया।

लोक कल्याणार्थ भगवान विष्णु ने भूलोक पर अवतरित होना चाहा और गरुड़ को आदेश दिया कि वैकुण्ठ की क्रीडाद्री को आनन्दाद्री के रूप में भूलोक पर पूरब सागर तीर पर स्वर्णमुखी नदी की उत्तर दिशा में स्थापित करें। दास ने अपने स्वामी की आज्ञा की, क्षणों में पूर्ति की।

कृत युग में वृषभ नामक दानव उस पर्वत पर बस गया और वहाँ के जलाशयों में नहाकर अपने इष्ट देवता नारसिंह के सालिग्राम की पूजा करते हुए तपस्या कर रहा था। लेकिन जनम से संक्रमित दानव गुणों के कारण उस पर्वत के परिसर प्रांतों के मुनि जनों को

सताने लगा। उस दानव से पीड़ित मुनि वृन्द ने महाविष्णु से सम्बंधित तपस्या कर, उनके प्रत्यक्ष होने पर अपनी व्यथा को सुनाया। उनकी दीनता पर तरस खाकर महाविष्णु वृषभ दानव के सामने, उसके नारसिंह सालिग्राम में से प्रकट हुए। वृषभ, परमात्मा के दिव्य स्वरूप को देखकर आनंद से पुलकित हो अनेक विधियों में उनकी स्तुति करने लगा। भगवान विष्णु ने संतुष्ट होकर उसे वरदान मांगने को कहा। दानव ने कहा कि स्वयं भगवान से युद्ध करने की उसकी एकमात्र इच्छा है। कोई अन्य इच्छा ही नहीं है। भक्त की इच्छा की पूर्ति करने भगवान श्रीहरि ने भी अपने अगणित बल पराक्रमों को प्रकट किया। संतुष्ट दानव ने भगवान से प्रार्थना की कि स्वामी! आप अपने आयुध से मेरे प्राण हर लें और मुझे मोक्ष दें। कृपया भविष्य में इस पर्वत के नाम को मेरे नाम से अभिहित होने की कृपा करें। श्रीहरि ने भी भक्त की इच्छा की पूर्ति की। यह आनन्दाद्री आगे चलकर वृषभाद्रि के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

इस तरह वैकुण्ठ की क्रीडाद्रि, भूलोक पर आनन्दाद्रि के नाम से प्रचलित हुई तथा बाद में वृषभाद्रि हो गयी।

त्रेता युग में अंजना देवी ने इसी पर्वत पर वायु देव की कृपा के लिए तपस्या की थी तथा उनकी दया से ही अजेय आंजनेय को भी पाया था। अंजना देवी की विजय गाथा के कारण यह पर्वत अंजनाद्रि के नाम से प्रसिद्ध भी हो गया।

द्वापर युग में इसका नाम शेषाचल हो जाने से सम्बन्धित एक गाथा है।

श्री महाविष्णु एक दिन जब अपनी पत्नी के साथ सुन्दर भवन में एकांत में रहे, उस समय आदि शेष को द्वार रक्षक रहने को

नियमित किया। उसी समय, मलयाचल के स्वामी वायुदेवता, विष्णु के दर्शनार्थ आ गये। आदि शेष ने उसे रोका। वायुदेवता ने कुपित होकर कहा कि मुझे महा विष्णु से बहुत जरूरी काम है। मुझे रोको मत। सनक सनन्दन तथा जय विजय की कहानी को भूल गए क्या?' इस तरह कहते हुए कदम आगे बढ़ाया भी। आदि शेष भी स्वामी भक्त है न? इस कारण वह भी अपनी कर्तव्य निष्ठा पर अडिग रहा। वायु देवता और आदि शेष के बीच लड़ाई छिड़ गयी।

लक्ष्मी देवी को इसके बारे में मालूम होते ही उन्होंने अपने पतिदेव को बता दिया। महा विष्णु ने सोचा कि उन दोनों के घमंड को दूर करने का समय आ गया है। भीतर से ही उन्होंने आदि शेष से पूछा कि यह गड़बड़ क्या है? जैसे ही आदि शेष ने बताना प्रारम्भ किया, विष्णु द्वार तक स्वयं पधारे। उन्हें देखते ही वायु देवता, साष्टांग दंड प्रणाम कर, उनकी भूरि-भूरि स्तुति कर मुकुलित हस्तों से खड़ा हो गया। विष्णु ने उसे समझाते हुए कहा, 'आदि शेष समझता है कि वही एकमात्र बलवान है। खैर, उससे तुम क्यों भिड़ रहे हो?' विष्णु के वक्तव्य से आदि शेष में अहम् की भावना प्रवेश कर गयी और उसी के अनुसार बातें भी आ गयीं। भगवान विष्णु ने सोचा कि इन दोनों के गर्व को शांत करने का यही सही समय है। उन्होंने कहा, ''पराक्रम को कार्य रूप देने में ही सार्थकता है। इसीलिए आप दोनों को अपने-अपने पराक्रम के प्रदर्शन का अवसर दे रहा हूँ। भूलोक पर मेरी क्रीड़ाद्री जो है, वह अब आनन्दाद्री, वृषभाद्रि, अंजनाद्रि के नामों से भी व्यवहृत है। आदि शेष! तुम उस पर्वत को अपने बल से घेर लेना! वायु देवता को, इसे अपनी शक्ति से हिलाना होगा। तभी आप दोनों में से अधिक बलशाली का निर्णय हो सकेगा।'' स्वामी की बातों को सुनते ही झट आदिशेष भूलोक पर पहुँचा। तीन योजन चौड़ा

(एक योजन का आधुनिक काल का माप है लगभग 8 किलोमीटर) और तीस योजन (लगभग 2400 किलोमीटर) लंबा अपने शरीर से आनन्दाद्रि को अपने पूरे बल से घेर लिया। वायु देवता ने भी अपने पूरे बल से आनन्दाद्री को हिला देने का प्रयत्न किया लेकिन विफल रहा। ब्रह्मादि देवता उत्सुकता से देख रहे थे कि आखिर किसकी जीत होगी?

इस तरह वायु देवता तथा आदि शेष - दोनों बिना किसी विराम के अपने पूरे बल के साथ हुंकार और फुफकार करते हुए इस युद्ध में भिड़ रहे थे। इस युद्ध से अनहोनी की शंका से ब्रह्म देवता ने वायु देवता के सामने, इस युद्ध को रोकने का प्रस्ताव रखा। लेकिन नहीं माना। बाकी देवताओं ने आदि शेष से कहा कि इस युद्ध को लोक शान्ति के लिए रोकें। आदि शेष ने देवताओं की बात मान ली और अपने बल में ढील कर दिया। इसे देखकर तुरंत वायु देवता ने अपने बाल को बढ़ाया और आनन्दाद्री को उखाड़कर दूर फेंक दिया। इसे देखकर महामेरु ने दुखित हो, वायु देवता से प्रार्थना की कि अपने पुत्र की रक्षा करें। वायु देवता ने झट आदि शेष युग आनन्दाद्री को पुनः स्वर्ण मुखी नदी के तीर पर उत्तर दिशा में ही रख दिया। तब जाकर सारे देवताओं को पता चला वायु और आदि शेष के बीच यह विवाद हुआ है। उन्होंने मुक्त कंठ से कह दिया कि भगवान विष्णु की इच्छा सफल हो और शेष युत क्रीडाद्रि शीघ्र शेषाचल के नाम से प्रसिद्ध हो। इतने में लोक कल्याण की दृष्टि से आदि शेष और वायु देवता दोनों ने गले मिलकर फिर से पुरानी मित्रता को जोड़ी। ध्यान देने की बात है कि तब से लेकर शेषाचल नाम को सार्थक बनाते हुए यह पहाड़ नेल्लोर जिले के रापूरु मण्डल के 'पेंचेला कोना' नामक पहाड़ी प्रांत के ऊपर से बारीक पूँछ की तरह प्रारम्भ होकर, आगे

कई मोड़ लेते हुए सर्पाकार लेकर तिरुमल तक व्याप्त है तथा ठीक आनंदनिलय के गालि गोपुरम के पास फन फैलाकर रहने की भंगिमा में दिखाई देता है।

धरा के भार को कम करने के लिए यहाँ पर अवतरित श्री कृष्ण के निर्याण के बाद कलियुग का प्रारम्भ हुआ। पुराणों में कहा गया है कि कलियुग एक पाप कूप होने के कारण, अपने भक्तों की रक्षा हेतु वैकुण्ठवासी महाविष्णु, वेंकटाचलपति के नाम से इस क्रीडाद्री पर अवतरित होंगे और वेदवती की प्रार्थना के अनुसार पद्मावती के रूप में उसका जन्म होने से, उसे अपनी पत्नी बना लेंगे। हम देख सकते हैं कि पुराणों की वाणी आज सही निकली तथा तिरुमल अब भूलोक वैकुण्ठ ही बन गया है।

श्री वेंकटेश्वर का निवास आनंदनिलय है। इस क्रीडाद्री पर ही रहने के कारण कलियुग में वेंकटाचल नाम से प्रसिद्धि पायी है। वेंकटाचलाधिपति हैं स्वयं श्री वेंकटेश्वर स्वामी।

वें + कट + अद्रि = पापों को मिटाने का पर्वत। इसमें 'वें' अमृत बीज है। कट का अर्थ है स्वर्ण। विद्वानों का मानना है कि अमृत तथा ऐश्वर्य का निधान है - यह वेंकटाचल एवं इसके दर्शन मात्र से लोगों के पाप सभी मिट जाने से दोनों लोकों में सुख पाते हैं। यही विश्वास भारत तथा विदेशों में भी प्रचलित होने के कारण सभी वेंकटाचल की यात्रा कर रहे हैं। वेंकटाद्रि के कई नामों में सप्तगिरि नाम ही अत्यंत प्रचलन में है। वराह पुराण के अनुसार इस अद्रि के कुछ अन्य सार्थक नाम भी हैं।

तिरुमल की यात्रा के बाद भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति होने के कारण-चिंतामणि, दर्शन मात्र से ज्ञान की प्राप्ति होने के कारण-

ज्ञानाद्रि, सकल पुण्य तीर्थ यहीं पर रहने के कारण-तीर्थाद्रि, पुण्यों को देनेवाली पुष्करिणी यहीं पर होने के कारण-पुष्कराद्रि, कनक (स्वर्ण) वर्ण का होने के कारण-कनकाद्रि, नारायण नामक भक्त अपनी तपोनिष्ठा के बाद श्री महाविष्णु का साक्षात्कार पाने के कारण-नारायणाद्रि, गरुड़ द्वारा वैकुण्ठ से भूलोक पर लाये जाने के कारण-गरुडाद्रि, श्वेत वराह स्वामी का निवास स्थान होने के कारण-वराहाद्रि, श्रीनिवास का निलय होने से श्रीनिवासाद्रि, श्री वेंकटेश्वर का यहाँ अवतरित होने के कारण-वेंकटाद्रि - इस तरह भक्त वृन्द अपने-अपने अनुभवों के नेपथ्य में, विविध नामों से इस पर्वत को सम्बोधित करते रहते हैं।

इस तरह चारों युगों में तिरुमल क्षेत्र प्रसिद्ध हो गया है। चीनी से बनी सब मिठाईयाँ मधुर ही होती हैं न? इसी तरह इस क्षेत्र को भक्त जिस किसी नाम से भी सम्बोधित करें, वे नाम उनके सभी पापों को मिटाते ही हैं। और उन्हें भगवान की कृपा प्राप्त भी होती है। इसमें संदेह ही नहीं है।

वराह पुराण, स्कान्द पुराण तथा भविष्योत्तर पुराणों में, वेंकटाचल के वेंकटेश्वर स्वामी की लीलाओं और भक्तों पर दया को विस्तार रूप से वर्णन करनेवाले अध्याय अनेक हैं। वेंकटाचल एवं वहाँ के तीर्थों की महिमाएँ इनमें वर्णित हैं जो भगवान की विशिष्टता के प्रमाण हैं तथा कलियुग में तीर्थ यात्राओं की महत्ता के उदाहरण हैं।

इस कलियुग में वेंकटाचलपति अपने भक्तों से मात्र एक पग की दूरी पर ही रहते हैं। एक बार पुकारें तो झट प्रत्यक्ष होकर भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। उस स्वामी के दिव्य मंगल रूप को देखने मात्र से उनकी वह पावन मूर्ति हृदय तल पर टिक जाती है तथा

तन्मयता छा जाती है। यह बात अनुभवैक वेद्य है। इसी कारण तिरुमल भूलोक का वैकुण्ठ ही है। विदेशों में भी भक्त श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिरों का निर्माण कर, उन्हें पूज रहे हैं।

वेंकटाचल के दिव्य तीर्थ

श्री वेंकटाचल में अनेकानेक दिव्य तीर्थ हैं जो अत्यंत पवित्र तथा नाम से सार्थक हैं। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं कि वे सभी उस जगदीश से ही स्थापित हैं ताकि मानव सभी उनमें स्नान कर पवित्र हो जाएँ। आल्वारु तीर्थ एवं फूलों का कुंआ मात्र मानव निर्मित हैं। निरंतर बहती हुई जीव नदियों की तरह वे भी सदियों से हैं। यात्रियों के लिए उपलब्ध उनके बारे में थोड़ी-सी जानकारी निम्नवत है।

1. कपिल तीर्थ

कपिल तीर्थ, शेषाचल के नीचे है जो सत्तर तीर्थों का सम्मलेन है। कपिल तीर्थ में नहाकर, कपिलेश्वर का दर्शन कर लेने के बाद ही तिरुमल पर श्री वेंकटेश्वर के दर्शन के लिए जाना यहाँ का सम्प्रदाय है।

पुराने जमाने में कुछ महाराजा श्री वेंकटेश्वर के दर्शन के लिए यात्रा कर रहे थे। उनमें से माधव नामक एक नित्याग्नि होत्र तथा पूजादिक करनेवाला एक वैदिक ब्राह्मण, कामातुर होकर कुंडला नामक स्त्री से बलात्कार संभोग करता है। आखिर उस स्त्री के मरणोपरांत, महाराजाओं के साथ चलकर, एक दिन रात तिरुपति पहुँचा। प्रातः उन सब महाराजाओं ने कपिल तीर्थ पहुँचकर, वहाँ स्नान कर, अपने-अपने पितरों को पिंड प्रदान किए। उनके साथ माधव ने भी यथाशक्ति अपने पितरों को मृत्तिका पिंड प्रदान किया।

उसके सभी पितृ देवता इससे खुश हो गए। फलतः वे सभी स्वर्ग लोक पहुँचे। इस कारण कपिल तीर्थ पर स्नान तदुपरांत पितरों को पिंड प्रदान लाभ दायक सिद्ध हो रहा है।

यात्रियों के साथ माधव भी उस रात कपिलेश्वर की सेवा कर, वहीं सो गया। कुछ देर तक सोकर, माधव, बाल रवि की तरह नींद से उठा तथा पूर्ववत उत्साह तथा तेज के साथ वेंकटाचलपति की दर्शनाकांक्षा से अकेले ही शेषाचल पहुँचने पैदल निकल पड़ा। उसके भाग्य के बारे में जानकार ब्रह्मादि देवतागण उससे मिलकर बातें करने लगे। 'हे आर्य! आपके सभी पाप कपिल तीर्थ स्नान के बाद मिट गए हैं। अब तुम वेंकटाद्रि पर पहले इमली के पेड़ के पास पुष्करिणी है, उसमें स्नान करो। उसके तीर पर जो वराह स्वामी हैं, उनके दर्शन से पुनीत होकर, उसके बाद श्री वेंकटेश स्वामी का दर्शन कर लो। तुम्हारा जन्म धन्य होगा। जन्मांतर में चंद्र वंश के चोल राजाओं में सुविख्यात सुधर्म नामक राजा के पुत्र के रूप में जन्म लेकर चोल राज्य पर राज करोगे। तुम्हें महालक्ष्मी समान पुत्रिका होगी, साक्षात श्री महाविष्णु ही तुम्हारे दामाद बनेंगे। इस प्रकार तुम्हें साक्षात विष्णु को कन्यादान करने का फल मिलेगा। तथा इस पुण्य के कारण, बहुत समय तक राज करके, अंत में मरणोपरांत परम पद को प्राप्त हो जाओगे।' इस तरह भविष्यवाणी सुनाकर वे सब तिरोहित हो गये। माधव ने उन सब देवताओं के अन्तर्निहित होने की दिशा को नमन कर, उनके आदेशानुसार तिरुमल की पुष्करिणी में स्नान तथा वराह स्वामी के दर्शन के बाद ही श्री वेंकटाचलपति की सेवा की। इसका इतिहास ही साक्षी है कि इसी पुण्य फल से उन्होंने अपने दामाद के रूप में माधव को पाया और दिव्यत्व भी प्राप्त किया। इस कथा के द्वारा कपिल तीर्थ की महिमा स्पष्ट है। इसी कारण तिरुमल के यात्री

पहले कपिल तीर्थ का दर्शन कर, पितृ ऋण को चुकाते हैं। स्वामी के दर्शन के बाद, वहीं सोकर, सुबह तिरुमल के लिए रवाना जो जाते हैं। तिरुमल पर स्वामी पुष्करिणी स्नान तथा वराह स्वामी के दर्शन के बाद ही तिरुमलेश के पावन दर्शन कर लेने का सम्प्रदाय था। लेकिन आजकल, तिरुमल पर ही यात्री निवास तथा उनके आवागमन की विस्तृत देवस्थान के द्वारा अब कपिल तीर्थ में ही यात्रियों के लिए अनेक सुविधाएँ उपलब्ध करते हुए उन्हें आकृष्ट करते रहने के कारण आशा है भविष्य में कपिल तीर्थ भी यात्रियों की दृष्टि से अधिक प्रिय तीर्थ राज अवश्य होगा।

पुराने जमाने में कपिल महर्षि शेषाचल के नीचे आश्रम बनाकर वास करते हुए वहीं तपस्या कर रहे थे। कहा जाता है कि उस समय पाताल लोक में उनके द्वारा पूजा गया शिव लिंग ही उभरकर यहाँ आया। स्थल पुराण के अनुसार पद्मावती श्री वेंकटेश्वर के विवाहोपरांत सकल देवी देवताओं के स्वस्थानों पर चले जाने के बाद, शिव जी, अर्धांगिनी पार्वती के साथ कपिल महा मुनि के आश्रम पर पधारे और उन्हें कटाक्षित करते हुए यहीं कपिलेश्वर नाम से रह गए। आज श्री प्लवोत्सव नाम पर कपिलेश्वर स्वामी के उत्सव तिरुमल तिरुपति देवस्थान के द्वारा वैभव के साथ मनाये जाते हैं। भक्त जन इस महोत्सव का आनंद अवश्य उठायें और इहलोक एवं ऊर्ध्व लोकों की साधना में सफलता पाएँ।

कपिल तीर्थ के ऊपर शक्र तीर्थ है। कहा जाता है कि उस तीर्थ में स्नान करने के बाद ही देवेंद्र को गौतम महर्षि के द्वारा दिए गए श्राप से छुटकारा मिला। उसके ऊपर विष्वक्सेन तीर्थ है। जन श्रुति यह है कि वरुण देवता के पुत्र विष्वक्सेन ने इसी तीर्थ पर स्नान कर,

भगवान विष्णु की तपस्या कर, उनके सेनापति बनने का सौभाग्य पाया। इसी तरह कपिल तीर्थ के आसपास, पंचायुध तीर्थ, अग्नि तीर्थ, ब्रह्म तीर्थ तथा सप्तर्षि तीर्थ भी हैं। इस तरह वेंकटाचल के सभी तीर्थों का कपिल तीर्थ एक संगम स्थल होते हुए, अधिकाधिक फलदायी माना जा रहा है। इस कारण भक्तजन इस तीर्थ पर एक रात के लिए सोने का सम्प्रदाय अभी भी जारी है। निम्नलिखित कथा इस वक्तव्य की साक्षी है।

पुराने जमाने में, वेद वेदांगों में एक महान पंडित, दुनिया भर के तीर्थ क्षेत्रों का दर्शन करने का संकल्प कर तीव्र तपस्या करने लगा। भगवान ने चौथे पहर पर उसके स्वप्न में प्रकट होकर कहा,' हे वत्स! तुम्हारी इच्छा के अनुसार इस दुनिया भर के पुण्य क्षेत्रों के दर्शन, कोई एक जन्म में पूरा होना असंभव है। इस कारण अगर तुम वेंकटाचल पर जो तीर्थ हैं उन सबमें स्नान कर सको तो तीनों लोकों के तीर्थों में स्नान करने का फल पाओगे।' उसी क्षण वह भक्त चल पड़ा। कपिल तीर्थ से लेकर सभी दिव्य तीर्थों में स्नान कर महापुण्य प्राप्ति की। इस बहु प्रचलित कथा के कारण स्पष्ट है कि कपिल तीर्थ, इस वेंकटाचल के सभी तीर्थों का अद्भुत सम्मेलन है।

2. स्वामी का पुष्करिणी तीर्थ

तिरुमल के शिखरों पर श्री वेंकटेश्वर स्वामी के आनंदनिलय निवास की उत्तर दिशा में, ईशान्य भाग में स्वामी की पुष्करिणी है। इस पुष्करिणी के वायव्य भाग में श्री वराह स्वामी का मंदिर है। पुराणों में कहा गया है कि श्री महाविष्णु के आज्ञानुसार क्रीडाद्रि को भूलोक पर लाते समय ही, गरुड़ इस पुष्करिणी को भी लाया था।

श्री भू देवियों के साथ श्री महा विष्णु की जल क्रीड़ाओं के कारण यह पुष्करिणी पावन तीर्थ हो गया। कहा जाता है कि आकाश गंगा के जल अन्तर्वाहिनी बनकर इस क्षेत्र में वास करने के कारण, यह तीर्थ सभी तीर्थों में सर्वोत्कृष्ट का गौरव पा रहा है। वराह पुराण में कहा गया है कि इस तीर्थ का दर्शन तथा इसमें स्नान करने से सकल सिद्धियाँ अवश्य प्राप्त होंगी।

स्वामि पुष्करिणी स्नानं, सद्गुरोः पाद सेवनम्
एकादशी व्रतं चाऽपि त्रयमत्यन्त दुर्लभम्

इसका तात्पर्य है स्वामी की पुष्करिणी का स्नान, सद्गुरु की चरण सेवा तथा एकादशी व्रत नामक तीनों पुण्य साधारणतया अप्राप्त हैं।

वैकुण्ठ एकादशी के दिन, श्रद्धालुओं द्वारा, बड़ी श्रद्धा तथा भक्ति के साथ इस पुण्करिणी में स्नान कर, श्री तिरुमलेश के पवित्र दर्शन तथा वैकुण्ठ द्वार द्वारा आनंद निलय की परिक्रमा करने के मनोहरी दृश्य आज भी देखने को मिलते हैं।

इस पुष्करिणी की अनेक गाथाओं में से आत्मा राम की गाथा अत्यंत रोचक है। पूर्व काल में शंखण नामक चंद्र वंशी राजा, सांकाश्य नामक राष्ट्र में राज कर रहा था, जो उसे पितरों के द्वारा संक्रमित हुआ था। कुछ वत्सरों के बाद, उसके सामंत राजा सभी मिलकर उसे राज्याधिकार से च्युत कर, पत्नी, बंधु वर्ग के साथ भगा दिए। राजा शंखण परितप्त हृदय से परिवार के साथ दक्षिण दिशा की तरफ चलकर, रामेश्वर पहुँचा तथा वहाँ समुद्र स्नान कर, कुछ दोनों तक वहीं ठहरा।

तदनंतर, उत्तर दिशा की ओर रवाना होकर दक्षिण काशी के पास सुवर्ण नदी को देखकर उसमें स्नानादिक कर, श्री कालहस्ती तथा

ज्ञान प्रसूनाम्बा की सेवा में कुछ दिन उसने बिताये। राज्य को खो देने की चिंता में व्यग्र राजा को एक प्रातः वेला में अशरीर वाणी सुनाई दी। 'विपदा के दिनों में धैर्य ही मानव का कर्तव्य है। चिंतित होने से लाभ नहीं है। धीरज धरने से ही विजय की प्राप्ति होगी। इसीलिए तुम भी चिंता को छोड़, यहाँ के वेंकटाचल पर जाओ और वहाँ की पुष्करिणी में नहाओ। तत्पश्चात श्रीहरि के ध्यान में लगे रहो। इस तरह करते रहने से तुम्हारा राज्य तुम्हें वापस मिल जाएगा। इसलिए, तुरंत वेंकटाचल पर पुष्करिणी का पावन दर्शन कर कृतार्थ हो जाओ।' शंखण राजा ने इस वाणी को सुनते ही सपरिवार वेंकटाचल पर चढ़कर, स्वामी पुष्करिणी का दर्शन किया। स्नानानंतर, श्री वेंकटाचलपति की सेवा में निमग्न हो गया। इस तरह करीब छः महीने बीत गए।

एक दिन शंखण राजा पुष्करिणी के जल में जब जाप कर रहा था, उस समय नदी के बीच में दोनों तरफ श्री भू देवियों के साथ श्री महा विष्णु दिव्य प्रभा से भासमान होते हुए प्रत्यक्ष हो गए। अपने भक्त की चिंता के बारे में वे जानते ही हैं न? उन्होंने कहा, 'श्रद्धा और भक्ति के साथ इस पुष्करिणी में स्नान करते रहने के कारण, तुम्हारे सारे पुराने पाप मिट गए हैं। तुम्हारी शुद्धि हो गयी है। तुम फिर से राज्य करने के योग्य हो गए हो। भक्ति से इस पुष्करिणी में नित स्नान करने वाले अधिकारी बनने योग्य हो जाते हैं।'

अधोक्षज के आसीस पाने के बाद सपरिवार शंखण अपने राज्य के लिए चल पड़ा। रास्ते में ही अपनी प्रजा के द्वारा मालूम हुआ कि उसके सभी सामंत राजा, आपस में झगड़ते-झगड़ते आखिर राज्य को छोड़कर चले गए हैं। उसने सोचा यह सब भगवान श्री वेंकटेश के

कृपा विशेष का ही फल है जो निःशेष शत्रु होकर अपना राज्य फिर से उसे प्राप्त हुआ। सानंद उसने श्रीवेंकटेश की अर्चना निरंतर करते हुए प्रजा का अपनी ही संतान की तरह पालन कर, आखिर अमर लोक की प्राप्ति की।

सभी तीर्थों में उत्तम होने के कारण यह स्वामी की पुष्करिणी कही जाने लगी। पंडितों का मानना है कि अपने आश्रितों को स्वामित्व भी प्रदान करने के कारण इसको सार्थकता भी मिली है।

आत्माराम नामक शीलवान विष्णु भक्त, हर दिन श्रीनिवास भगवान के ध्यान में लगा रहता था। कुछ दिन बाद पुरखों द्वारा मिली उसकी सम्पदा पूरी खर्च हो गयी। एक कौड़ी भी नहीं बचने के कारण हर दिन का खाना मिलना भी मुश्किल हो गया। उसके द्वारा लाभान्वित हुए लोगों में से एक भी उसकी कुछ भी सहायता नहीं कर रहे थे। आत्मा राम ने सोचा कि नियति बड़ी ही कठिन है तथा उसी क्षण श्री वेंकटाचल की यात्रा पर निकलने का निर्णय ले लिया। सर्वप्रथम उसने कपिल तीर्थ पर नहाकर कपिलेश्वर की पूजा अर्चना की। तदुपरांत तिरुमल पर्वत पर चढ़ते हुए, मार्ग में अनेक तीर्थों पर स्नान और पूजा भी करने लगा। आखिर स्वामी पुष्करिणी तक पहुँचने तक उसके सारे पाप मिट गए। तब जाकर उसे अवगत हुआ कि 'आर्योक्ति के अनुसार हर एक प्राणी को अपने कर्मों का फल, उन्हें झलने से ही मिट जाता है। यह तो अक्षरशः सत्य है।' यह ज्ञात होते ही उसे लगा कि अब इस ज्ञान का कारण भी यह पुष्करिणी ही है। भक्त जनों के उद्धारक स्वामी वेंकटेश की स्तुति करते हुए पुष्करिणी के पास ही आत्माराम रहने लगा। आसपास मिलने वाले फलों, कंद मूलों से पेट भरते हुए, तीनों पहर उसी तीर्थ में स्नानादिक कर, भगवान की पूजा अर्चना करते हुए समय बिताने लगा।

एक दिन आत्माराम फलों के लिए पर्वत पर ढूँढ़ते समय, एक गुफा में प्रवेश किया तथा वहाँ तपोमग्न सनत्कुमार नामक मुनि को देखा। तुरंत विनय के साथ दंडवत प्रणाम किया। हाथ जोड़कर सर झुकाकर उसके सामने खड़ा रहा। कुछ देर बाद आत्माराम ने कहा, 'हे मुनि श्रेष्ठ! आपके दिव्य तेज से मेरे सभी पाप मिट गए हैं, अज्ञानान्धकार दूर होकर, अब ज्ञान का प्रकाश मुझमें भर गया है। मुझ पर कृपा कर मुझे अपना शिष्य बना लो।'

उस दिव्य मुनि ने भी अपने ज्ञान नेत्र से इसकी सारी कथा को जानकर, कहा, 'हे भक्त! हमारे सभी पापों को हर कर हमें मुक्त करने वाला मात्र नारायण भगवान ही है। तुम पूर्व जन्म में नारायण को भूलकर भोग लालसा में डूबे रहे थे। उस पाप का फल तुम्हें भोगना ही होगा। सम्पदा को भोग के लिए ही मानकर त्यागने की इच्छा को नकारने से सिर्फ पाप ही प्राप्त होगा। अब तुम्हें ज्ञान की प्राप्ति हुई है। अपने पूर्व जन्म की चिंता को छोड़ दो। आज से अपने भविष्य के लिए, निश्चल भक्ति से यहाँ की पुष्करिणी में स्नान कर, जगज्जननी लक्ष्मी देवी का मनन करते रहो तो उस माँ की अनुकम्पा से सुख पाकर, परम पद को प्राप्त करोगे।' कहकर वह मुनि श्रेष्ठ अन्तर्निहित हो गया।

आत्माराम आश्चर्य चकित हो गया। बाद में उसने उस योगीन्द्र के उपदेश को फिर से याद किया और अधिक भक्ति तथा श्रद्धा के साथ पुष्करिणी में स्नान कर, उसी तट पर बैठकर तप में लीन हो गया। एक दिन पंचायुध धारी होकर दिव्याभरणों, परिमल भरी फूल मालाओं से अलंकृत महा विष्णु अपनी दोनों पत्नियों के साथ वहाँ दर्शन दिया और कहा, 'हे भक्त! इस तीर पर तप करने के कारण

तेरे सभी पाप मिट गए हैं। सत्पुरुषों के दर्शन के कारण, ज्ञान से संपन्न भी हो गए हो। निस्चल मन से लक्ष्मी देवी की सेवा के कारण वह भी प्रसन्न हो गयी है। इस कारण तुम लम्बी आयु और स्वास्थ्य के साथ महान सम्पदा को प्राप्त करोगे। परलोक का सुख भी तुम्हें प्राप्त होगा।' कहकर भगवान महा विष्णु के अन्तर्निहित होने के बाद ही आत्माराम होश में आया और अतीव आनंद से आँसू बहाते हुए गद्गद कंठ से आकाश की तरफ देखते हुए भगवान महाविष्णु को नमस्कार करते हुए कहा 'इस जन्म में जितने भी पुण्य करो, लेकिन पूर्व जन्मों का फल अवश्य भोगना ही पड़ेगा।' और अपनी कुटी की तरफ चल पड़ा।

आत्मा राम पूर्व जन्म के पुण्य फलानुसार पुरखों की सम्पदा को भोगा। अतिथियों का आदर सम्मान किया। शास्त्रों का ज्ञान भी पाया, लेकिन पुरातन पापों के कारण, मुसीबतों का सामना भी किया। बाद में पुण्य क्षेत्रों का दर्शन भाग्य, स्तपुरुषों का संग, उनके हित वचनों का अनुसरण करने के कारण, श्रीमन्नारायण की दया को पाया, जो सकल ऐश्वर्य प्रदाता व सम्पदाओं के दाता हैं। इस तरह उसका जन्म भी सार्थक हो गया।

'एषस्सर्व भूतान्तरात्मा अपहतपाप्मा दिव्यो देव एको नारायण' नामक वेदोक्ति का भाव आत्माराम के जीवन वृत्त को बल दे रहा है। चारों पुरुषार्थों में से धर्म, अर्थ, काम से बढ़कर मोक्ष की कामना करनेवाले सभी श्रीमन्नारायण की ही उपासना करते हैं। वही नारायण, कलियुग के श्री वेंकटेश्वर हैं जो तिरुमल क्षेत्र के वासी हैं। मोक्ष का प्रश्रय मात्र श्रीनिवास ही है। सद्गति पाने के लिए, इस धरा पर भक्ति मार्ग के अलावा और कोई मार्ग ही नहीं है।

अगर किसी कारण इस भक्ति साधना में अड़चन पैदा हो तो भी, वे सब अगले जन्म में हट जाते हैं तथा वह जीव परम पद को प्राप्त हो जाता है। इस तरह तीर्थ क्षेत्र दर्शन, मोक्ष के साधन हैं।

3. आकाशगंगा तीर्थ

स्वामी पुष्करिणी तीर्थ की उत्तर दिशा में अनेकानेक महान फल भरित पेड़ों, सुरभित सुमनों की लताओं से भरी पर्वत पंक्तियाँ हैं। इस घने जंगल में कभी क्रूर जंतु यथेच्छा से विहार किया करते थे। वहाँ ऊपर के एक सुरंग मार्ग से हमेशा एक जल की धारा बहती ही रहती है जो आकाशगंगा के नाम से विख्यात है। यहाँ की धारणा है कि पर्वत के अंदर से उभरकर आ रही इस जल धारा में साक्षात स्वर्ग लोक की गंगा के पवित्र जल भी प्रवाहित होते हैं। इस कारण यह भी अति पवित्र तीर्थ है।

पुराने जमाने में गौतमी तट पर एक सज्जन, अपनी पत्नी व परिवार के साथ वास करता था जो सकल शास्त्रों का ज्ञानी, पुराण सार ज्ञाता वेद पंडित, धर्मों का सूक्ष्म जानने वाला उत्तम वंशज तथा पितृ देवताओं के प्रति भक्ति रखनेवाला था। वह अपने पितरों से मिली सम्पदा का भोग करते हुए अतिथि, अभ्यागतों का भी उचित सत्कार करता था। एक दिन उसके यहाँ एक अभ्यागत आया। उस दिन पितृ श्राद्ध का पवित्र दिन होने के कारण उस सज्जन ने उस अभ्यागत को श्राद्ध के लिए नियुक्त किया। अत्यंत भक्ति एवं श्रद्धा के साथ पितृ कार्य करने के बाद उस सज्जन ने घर आये अभ्यागत को यथोचित रीति से पुरस्कृत कर, सम्मानपूर्वक विदा किया। कुछ दिनों बाद उस सज्जन का मुख मंडल गधे की मुखाकृति में बदलने लगा। इसका कारण न जानते हुए सज्जन बहुत चिंतित हो गया और

इस विपत्ति से छुटकारा पाने के लिए कृष्णा नदी, पेन्ना नदी के पवित्र जलों में स्नान करते हुए उन-उन तीर प्रांतों पर के क्षेत्रों की यात्रा करते हुए, एक दिन सुवर्ण मुखी नदी के तट पर अगस्त्याश्रम पर पहुँचा। (आजकल यह आश्रम तिरुपति से चित्तूर जाने के मार्ग में चंद्रगिरि के पास तोंडवाडा नामक ग्राम की उत्तर दिशा में, सुवर्ण मुखी नदी के तट पर, अगस्त्य महामुनि द्वारा स्थापित शिवालय के नाम से प्रसिद्ध है।) वहाँ के मुनि समुदाय के बीच तेजोमय रूप धरकर बैठा हुआ है। उनके पास पहुँचकर विनय प्रार्थना करते हुए उसने अपनी पूरी राम कहानी सुनायी तथा इस विकृत रूप से छुटकारा पाने के मार्ग के लिए प्रार्थना की।

महामुनि ने थोड़ी देर के लिए आँखें मूंदकर अपनी तपःशक्ति तथा ज्ञान नेत्र से उस सज्जन की इस दुरावस्था का कारण पहचाना कि उसने पितृ कार्य के लिए एक अपुत्रक को (पुत्र न होनेवाला) नियुक्त किया। और कुछ देर सोचकर मुनि ने कहा, 'हे पुत्र! तुम सकल शास्त्र पुराणों के ज्ञानी हो। शास्त्र ज्ञान के साथ अनुभव ज्ञान भी आवश्यक है। अगर तुम्हें कुछ विषय मालूम न हो तो बड़ों की सलाह लेनी चाहिए। खैर यहाँ के तीर्थ सभी अत्यंत पवित्र हैं। यहाँ से ईशान्य की तरफ करीब पंद्रह मील की दूरी पर, वेंकटाचल पर्वत जो है, वह अत्यंत पावन क्षेत्र है। वहाँ स्वामी पुष्करिणी नामक एक पुण्यतीर्थ है। तुम उस वेंकटाचल पर पहुँचो और उस स्वामी पुष्करिणी में भक्ति तथा श्रद्धा से स्नान करो तो तुम्हारे इस दोष का निवारण हो जाएगा। तदनंतर, उत्तर दिशा में स्थित आकाशगंगा तीर्थ में डुबकी लगाओ तो तुम्हारा यह गार्दभ (गधा) मुख गायब हो जाएगा और तुम्हारा असली मुख आ जाएगा। झट निकल पड़ो। तुम्हें आशीर्वाद सदा रहेगा।' इन

बातों को सुनते ही सज्जन, उनकी आज्ञा का पालन करने वेंकटाचल की तरफ चल पड़ा। पहले स्वामी पुष्करिणी में स्नान किया। वराह स्वामी की पूजा अर्चना की। आकाशगंगा तीर्थ में भी डुबकियाँ लगाया तो आश्चर्य! गार्दभ मुख गायब हो गया और पुरानी मुखाकृति वापस आ गयी। जन श्रुति है कि आकाशगंगा की स्तुति करते हुए वह सज्जन, कुछ सालों तक वहीं पर रह गया और बाद में वापस अपने प्रांत चला गया।

पुराने जमाने में अंजना देवी ने केसरी नामक वानर प्रमुख से विवाह किया था। बहुत सालों तक संतान न होने से दुखी होकर एक दिन मतंग मुनि के पास पहुँची और संतान के लिए मंत्रोपदेश की याचना उसने की। मत्ङग महामुनि ने उसकी भक्ति से आनंदित होकर कहा - 'हे पुत्री! वैकुण्ठ लोक की क्रीडाद्री अब इस भूलोक पर, स्वर्ण मुखरी नदी की उत्तर दिशा में है। वहाँ स्वामी की पुष्करिणी भी है। उस पुष्करिणी में स्नान करने से सकल दोषों का निदान होगा। पुष्करिणी के तट पर जो श्री वराह स्वामी का मंदिर है, उनके दर्शन से हमारी मनोकामनाएँ पूरी हो जाएँगी। उसी पुष्करिणी की उत्तर दिशा में एक दिव्य पर्वत है। पर्वत के अग्र भाग से आकाशगंगा बहती है। उस नदी में स्नान करने से पवित्र हो जाने के साथ, आयुर्वृद्धि तथा स्वस्थता भी मिलेगी। तुम निश्चल मन से आकाशगंगा के समीप बैठकर वायु देवता की दया के लिए मेरे दिए मन्त्र के जाप से, तपस्या करो। उसकी दया से अत्यंत बलशाली पुत्र तुम्हें जन्मेगा।' मतङ्ग मुनि से वायु देवता का मन्त्र लेकर, अंजना देवी तीर्थ पर जा पहुँची। दीक्षा से वायु देवता का मन्त्र जपते हुए तीव्र तपस्या करने लगी। कुछ दिन बाद वायु देवता प्रसन्न होकर उसके सामने प्रत्यक्ष हुए तथा उसकी इच्छा के अनुसार पुत्र सम्बन्धी वर दे कर फिर अन्तर्निहित हो गए।

अंजना देवी ने वायु देवता की कृपा से हनुमान नामक अत्यंत बलवान पुत्र को जन्म दिया। पुराणों में कहा गया है कि अंजना देवी ने जिस पर्वत पर तपस्या की, वह त्रेतायुग में अंजनाद्रि नाम से प्रसिद्ध हुआ। आकाशगंगा तीर्थ सकल पापों को मिटाने के साथ दीर्घायु और स्वास्थ्य देता है। अंजना देवी की कथा के अनुसार यह भी विदित हो गया कि उसके पास व्रताचरण करें तो संतानहीनों को संतान की प्राप्ति भी होगी।

अब यह भी प्रचलित हो गया है तो संतानहीनों को संतान में चित्ता नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन आकाशगंगा तीर्थ में स्नान कर अपने इष्ट देवता के नाम पर व्रत करनेवालों को संतान की प्राप्ति अवश्य होगी।

4. पाप विनाशन तीर्थ

पाप विनाशन तीर्थ के जल को देखने से लगेगा मानो नाम की तरह, अपने पास आकर नहाते हुए भक्तों के पापों का प्रक्षालन, नीचे से उभरते हुए कालुष्य के रूप में सच ही में यह कर रहा है। तिरुमल पर स्वामी पुष्करिणी की उत्तर दिशा की घाटियों में स्थित इस तीर्थ तक जाने के लिए तिरुमल तिरुपति देवस्थान वाले बसों को चलाते हैं। यात्री वहाँ जाकर अपने पापों से छुटकारा पा रहे हैं। यहाँ पश्चिम की तरफ थोड़ा सा पर्वतीय भाग चतुरस्राकार में आगे उभरकर आया है, जहाँ की प्रकृति अत्यंत सुन्दर है। कई पेड़ हैं जिनकी छाया से गर्मियों में भी मन को शान्ति मिलती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस तीर्थ के दर्शन मात्र से भगवान के प्रति आस्था बढ़ जाती है और यह तो हर किसी के लिए स्वानुभव सत्य है।

इस तीर्थ की महत्ता के बारे में एक पौराणिक गाथा भी है।

पुराने जमाने में भद्रमती नामक एक पंडित था जो वेद वेदांगों में, सकल शास्त्रों में महान ज्ञानी था। विनय सम्पदा में उसकी समता कोई नहीं रखता था। लेकिन सरस्वती पुत्र होने के कारण वह धन सम्पदा की दृष्टि से गरीब था। कोई भी व्यवसाय न होने के कारण, सम्पूर्णतया वह निर्धन था। उसकी मेधा संपत्ति को देखकर, कृता, सिंधु, यशोवती, कामिनी, मालिनी और शोभा नामक युवतियाँ उसकी पत्नियाँ बनीं। उनके द्वारा भद्रमती अधिक संतानवान हो गया। गरीबी में अधिक संतान वाली कहावत सच निकली। किसी तरह उसकी जीवन यात्रा गुजर रही थी। क्रमशः दिन भारी होने लगे। संतान और पत्नियों का पोषण उसके लिए कष्टतर हो गया। धनमूलमिदं जगत - हाँ। धनी लोग निर्धनों की जिम्मेदारी लेते नहीं है न? विद्या विहीन व्यक्ति अगर धनवान हो तो भी उसका सम्मान होता है। यह तो लोक रीति है। संसार में पंडितों का धनवान होना तो बहुत ही कम है और बहुत ही पुण्य विशेष से ही यह मुमकिन है। लेकिन दरिद्रता की चंगुल में जीवन बितानेवाले पंडित ही अधिकतर दिखाई देते हैं जिन्हें धन की अपेक्षा लेश मात्र भी नहीं होती है। विद्या की महत्ता को जानने वाले महाराजा लोग ही अक्सर पंडितों का सम्मान किया करते थे। लेकिन भद्रमती अन्यों के पास जाकर भीख मांगना नहीं चाहता था। उसका मानना था कि खुद की कमाई से अगर दलिया खाएँ तो भी जीवन गुजारने के लिए काफी है। इस तरह मुसीबतों से दोस्ती करते हुए, परिवार के साथ वह दिन काट रहा था।

धीरे-धीरे शरीर की शक्ति घटने लगी। इसी सोच में बैठे पति देव के पास कामिनी नामक पत्नी आयी और चिंता का कारण जानती हुई उसने कहा, 'हे पति देव मेरे बचपन में एक यतीन्द्र मेरे पिता के पास आये। बातों-बातों में उन्होंने कहा कि वेंकटाचल पर आकाशगंगा

नामक एक तीर्थ है, जिसमें स्नान कर, भूदान करनेवालों के सभी पाप दूर हो जाते हैं और वे लक्ष्मी देवी की कृपा के योग्य हो जाएंगे। इसीलिए आप आज ही इस यात्रा पर निकलिये और लक्ष्मी देवी की दया पाइये। यही आपकी समस्या का समाधान है।' पत्नी की बातों को सुनते ही भद्रमती, परिवार के साथ वेंकटाचल की यात्रा के लिए निकल पड़ा। मार्ग में सुशाली नामक नगर आया। वहाँ के लोगों से उसने सुना कि उस नगर में सुघोष नामक धनवान, गरीबों के प्रति दया रखने वाला तथा दान गुणी रहता है। भद्रमती ने उसके पास जाकर अपनी रामकहानी सुनाई तथा भूदान के रूप में सहायता की याचना की। सुघोष भी भद्रमती की ज्ञान सम्पदा को देखकर खुश हुआ। उसने सोचा कि इस पंडित को दिया हुआ दान तो अत्यंत समुचित और पुण्यप्रद भी होगा। भद्रमती के इच्छानुसार भूदान देकर सानंद विदा किया।

भद्रमती ने भी अत्यंत आनंद से फिर से यात्रा प्रारम्भ की। पहले कपिल तीर्थ पर स्नान कर कपिलेश्वर की अर्चना के बाद, वेंकटाचल की तरफ बढ़ा। वेंकटाचल में सर्व प्रथम स्वामी पुष्करिणी में स्नानानान्तर, वराह स्वामी की अर्चना करने के बाद, परिवार के साथ पाप नाशन तीर्थ पर पहुँचा। प्रसन्न मन से वहाँ नहाकर, सुघोष द्वारा मिली भूमि को एक गरीब सज्जन, गुणवान तथा बाल बच्चेवाले पंडित को भगवान की दया के लिए, दान के रूप में दे दिया। इससे लक्ष्मी नारायण भी प्रसन्न होकर, भद्रमती के सामने प्रत्यक्ष हो गए। भद्रमती ने भी भगवान के दर्शन से पुलकित मन एवं मुकुलित हस्तों से, आँखों से आनंदाश्रु बहाते हुए, अनेक प्रकार से उनकी स्तुति की। भगवान भी हर्षित होकर उसकी मनोकामना के अनुसार सकल सम्पदाओं को देकर, फिर से अन्तर्निहित हो गए। लक्ष्मी मनोकामना के अनुसार

सकल सम्पदाओं को देकर, फिर से अन्तर्निहित हो गए। लक्ष्मी नारायण की दया पाकर भद्रमती, अपने परिवार के साथ, सानंद अपने प्रांन्त की तरफ चल पड़ा। तदनन्तर, आनंद से बाकी जीवन भोग भाग्यों के बीच बिताकर, अंत में मुक्ति पाया। इसी तरह सुमति, दृढ मति की कथा में भी पाप विनाशन तीर्थ की महत्ता वर्णित है।

पुराणों का कथन है कि सप्तमी, भानुवार पुष्यामि, हस्ता नक्षत्र युत पावन दिन पर श्रद्धा भक्ति से इस पापनाशन तीर्थ में स्नान करने वाले भक्तों के पाप मिट जाते हैं और जीवन शुभप्रद होता है।

5. कुमार धारा तीर्थ

पापनाशन तीर्थ की वायव्य दिशा में स्थित यह तीर्थ भी अत्यंत पवित्र तथा नाम के अनुसार इसमें स्नान करने वाले शत वृद्धों को भी युवक बना देने की क्षमता रखता है। पुराणों के अनुसार, माघ महीने में मखा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा के दिन मध्याह्न इस तीर्थ में नहा कर, दक्षिणा के साथ अन्नदान करनेवालों को गंगादि पुण्य नदियों में स्नान करने का पुण्य प्राप्त होता है। इस कथन पर आधारित कहानी निम्नवत है।

सकल शास्त्रों का पंडित, कौण्डिन्य नामक एक वृद्ध सज्जन अपने शिष्य के साथ वेंकटाचल पर एक कुटी बनाकर वहाँ होमादि पवित्र कार्यक्रम करते हुए तपस्या कर रहा था। एक दिन वह पूजादिक द्रव्यों के लिए जंगल में गया तथा अपनी कुटी का मार्ग भूलकर, अपने प्रिय शिष्य के लिए 'हे कोण्डिन्य!' इस तरह आवाज देता हुआ बहुत देर तक रोता हुआ भटक रहा था। उस समय वेंकटेश स्वामी ने एक युवक के रूप में उस वृद्ध के पास आकर उससे पूछा, 'दादा! यह तो घना जंगल है। तुम तो बहुत देर से कौण्डिन्य का नाम

पुकारते जा रहे हो, लेकिन यहाँ कोई कौण्डिन्य नाम का आदमी ही नहीं है।' वृद्ध उसकी बातों से चिढ़ गया लेकिन कुछ देर बाद कहा, 'हे युवक! कौण्डिन्य मेरा शिष्य है। यहाँ सामने मेरे आश्रम में मेरे साथ रहता है। मैं तो यहाँ राह भूलकर भटक रहा हूँ। यहाँ मेरी सहायता करने और कोई नहीं है क्या? अब मैं आश्रम पहुँचूँगा कैसे? नित्य पूजादिक कर्म अभी बाकी हैं। मैं तो बूढ़ा हूँ, पैदल चल नहीं सकता। मेरे अपने कोई नहीं हैं यहाँ पर! अब मैं क्या करूँ?' वेंकटाचलपति ने उससे कहा, 'अरे ओ दादा? तुम्हारा शरीर तो दुर्बल है। देखने की शक्ति भी कमजोर है। शताधिक वृद्ध लगते हो। पैदल चल भी नहीं सकते हो। इस जंगल में बहुत सारे जंगली जानवर रहते हैं। यहाँ क्यों आये हो? अभी भी जीने की तेरी इच्छा बाकी है क्या?' उसकी बातों को सुन कर बूढ़े ने कहा, 'महोदय! तुम कौन हो मैं जानता ही नहीं। जीने की इच्छा नहीं है मुझे! लेकिन इस जन्म को सार्थक बनाने के लिए इस शरीर में जीव जब तक रहता है, माने मरण समय तक, देव ऋण से मुक्त होना चाहता हूँ। आज मेरी चिंता मात्र यही है कि आज के पूजादिक कर नहीं पा रहा हूँ मैं!' वेंकटाचलपति ने झट कहा, 'तो आप मेरा हाथ पकड़ो! मैं आपको बिना किसी असुविधा के, आपके आश्रम तक पहुँचा दूँगा।'

इस तरह कहकर उस बूढ़े को अपना हाथ का आसरा दिया। कुछ देर तक चलने के बाद युवक ने बूढ़े से कहा, 'दादा! देखो, यहाँ एक तीर्थ है। इसमें स्नान करो! बाद में आश्रम जायेंगे।' वृद्ध जैसे ही उस तीर्थ में डुबकी लेकर ऊपर उठा, आश्चर्य, उसका बूढ़ा रूप गायब हो गया और वह सोलह साल का नव युवक बन गया। वृद्ध भी अपने आपको पहचान नहीं सका। उसने अपने साथ आये हुए युवक के लिए चारों तरफ देखा, लेकिन वह था ही नहीं। अपने भक्त

के प्रति, भगवान की दया को देखकर, आकाश से देवताओं ने फूलों की वृष्टि की। बाद में उस नवयुवक को आजीवन देव ऋण से मुक्त होने के क्रम में पूजादिकों के लिए भूरि सम्पदाओं को देकर, वे सभी अदृश्य हो गए। इस तीर्थ में स्नान कर, बूढ़ा फिर से एक नव युवक हो जाने के कारण, यह तीर्थ कुमारधारा तीर्थ नाम से प्रसिद्ध हो गया। अपने आश्रम पहुँचकर, देवऋण से मुक्त होने के लिए, अनेक पूजादिक करता रहा और अंत में दिव्य लोकों को चला गया।

माघ महीने में मघा नक्षत्र युक्त पूर्णिमा से लेकर तीन महीने तक, हर दिन तीनों पहर अगर बूढ़े लोग स्नान कर यथा शक्ति श्री वेंकटाचलपति की पूजा अर्चना करते रहे, तो निश्चित रूप से पुनः उन्हें यौवन काल की शक्ति मिलेगी और इह लोक के सारे सुखों का अनुभव कर, अंत में वैकुण्ठ धाम पहुँचेंगे। इस तरह के पावन तीर्थ वेंकटाचल में होने के कारण यह एक दिव्य क्षेत्र है।

6. देव तीर्थ

यह देव तीर्थ श्री वेंकटाचलपति के आनंद निलय विमान की वायव्य दिशा में स्थित एक पर्वत गुफा में है। इस तीर्थ में पुष्यामि नक्षत्र युक्त गुरुवार या श्रवण नक्षत्र युक्त सोमवार के दिन या व्यतीपात योग में कोई भी शुद्ध होकर इस तीर्थ में स्नान करेंगे, तो उनके सारे दोष मिट जाएँगे। पुराणों में कहा गया है कि वे सपरिवार स्वस्थ सुखी जीवन बिताएंगे।

7. पांडव तीर्थ

यह तीर्थ स्वामी पुष्करिणी की पूरब दिशा में दो किलोमीटर की दूरी पर है। द्वापर युग में अपने वंशज कौरवों का वध करने के पाप

से मुक्त होने के लिए पांडवों को यहाँ कुछ दिन वास करने के लिए कृष्ण ने स्वयं भेजा था। कृष्ण की अनुमति पाकर पांडव वैशाख शुद्ध द्वादशी भानुवार के दिन शेषाद्रि पर पहुँचे। पुरखों का कहना है कि यहाँ एक जलाशय के पास आश्रम बनाकर उनके यहाँ रहने के कारण इस तीर्थ का यह नाम पड़ा है।

8. तुम्बुरु तीर्थ

पूर्व काल तुम्बुरु नामक गन्धर्व इस वेंकटाचल पर पापनाशन तीर्थ की उत्तर दिशा में, एक आश्रम बनाकर, श्री वेंकटेश्वर के दर्शन लिए तपस्या कर रहा था। कहा जाता है कि कुछ दिन बाद श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने दर्शन देकर उसकी मनोकामना पूरी की। इसी भाग्यवश तुम्बुरु भी श्री वैकुण्ठ धाम पहुँचा।

पुराणों का कथन है कि फाल्गुन महीने में शुद्ध पूर्णिमा के दिन, उत्तर फाल्गुनी युक्त सोमवार के दिन, इस तीर्थ में स्नान कर श्री वेंकटेश्वर की पूजा अर्चना करनेवाले फिर से इस धरा पर जन्म लेते ही नहीं।

9. घोण तीर्थ

तुम्बुरु तीर्थ के समीप में यह तीर्थ है जो भक्तों के पापों का नाश कर, उन्हें पवित्र बना देता है। पुराण काल में मुनि अगस्त्य ने अपने शिष्यों के साथ इसी तीर्थ के पास वास कर, इस तीर्थ की महिमा का वर्णन इस तरह किया था।

वनों का नाश करनेवाले, कन्याओं को बेचने वाले, मंदिर की जायदाद को बेचनेवाले, पानी भरे तालाबों की सीमाओं को हटानेवाले पापी, पतियों को दुतकारती पत्नियाँ, दिए हुए वचन को न निभाने

वाले, कचहरी में असत्य का साथ देनेवाले, मद्यपान करनेवाले, ब्रह्म द्वेषी, गुरुद्रोही, अपनी प्रशंसा खुद सदा करने वाले, विश्वास तोड़नेवाले - ये सभी घोर पापी माने जाते हैं। लेकिन अगर ये इस तीर्थ पर भक्ति एवं श्रद्धा से माघ महीने में सूर्योदय के पहले स्नान कर, उदय भानु की उपासना करेंगे तो इनके सभी पाप नष्ट हो जायेंगे। इतना ही नहीं इस तीर्थ पर ही एक महीने के लिए व्रत नियमों के साथ वास करें, तो पाप मिट जाते हैं तथा महान पुण्य भी प्राप्त होगा। घोण तीर्थ की महत्ता के क्या कहने? इस तीर्थ पर एक पीपल का पेड़ था। उसके सुराख में, एक मादा मेंढक रहती थी, जो पूर्व जन्म में तुम्बुरु नामक गंधर्व की पत्नी थी। अपने ही पति का उसे यह श्राप था। अगस्त्य महामुनि जब अपने शिष्यों को इस तीर्थ की महिमा को बता रहे थे, उन बातों को सुन कर, इस मेंढक ने उनके उपदेश का पालन किया। फलतः उसका शाप विमोचन हो गया और पूर्व रूप उसे मिल गया। इस परिणाम को देखकर गन्धर्व की पत्नी के आश्चर्य की सीमा न रही। आनंद के साथ अगस्त्य महामुनि के सामने प्रणाम कर पछताते हुई उसने कहा,' हे मुनीश्वर! मेरे पति से चिढ़ते रहने के कारण उसने मुझे यह शाप दे दिया। मैं यहाँ इस पेड़ की सुराख में कई दिनों से रह रही हूँ। आपके उपदेशों को सुनकर मैंने उनका अनुसरण किया और यह फल मुझे प्राप्त हुआ। शाप का पाप मिट गया। अब से मैं अपने पति के आज्ञानुसार जीवन यापन करुँगी। साध्वी बनूँगी। मुझे आशीर्वाद दें।' अगस्त्य महामुनि उसके पछतावे पर तरस खा गए। उन्होंने पतिव्रता के धर्मों को सुनाकर कहा,'

पतिरात्मा पतिर्विष्णुः पतिर्ब्रह्मा पतिः शिवः
पतिर्गुरुः पतिः तीर्थमिति स्त्रीणां विदुर्बुधाः

अगस्त्य मुनि के उपदेशों को सुनकर, धन्य होकर, गन्धर्व पत्नी ने कृतज्ञता प्रकट की। पति के आदेशानुसार घोण तीर्थ में माघ स्नान व्रत और श्रीमन्नारायण की पूजा करने के बाद, पति के तेक को फिर से पाकर सती बन गयी। पुराण ही इस कथा के प्रमाण हैं।

10. सनक सनंदन तीर्थ

पाप नाशन तीर्थ की उत्तर दिशा में पांच छः किलोमीटर की दूरी पर सनक सनंदन तीर्थ है जो वेंकटाचल पर स्थित अनेक पवित्र तीर्थों में से एक है। पुराणानुसार मार्ग शीर्ष शुक्ल द्वादशी उदय संध्या में इस तीर्थ में स्नान कर, त्रयोदशी से श्री वेंकटेश अष्टाक्षरी मन्त्र का एक महीने तक जाप कर व्रत दीक्षा लेने से उन व्यक्तियों की सकलेच्छाएँ पूरी होंगी।

11. काय रसायन तीर्थ

सनक सनंदन तीर्थ के बिलकुल पास ही यह तीर्थ है जिसमें स्नान कर, उसके जल का पान करते रहें तो वे भक्त निरोग होकर स्वस्थ जीवन बिताएंगे। शारीरिक बल पाकर बुढ़ापे के कष्टों से भी छुटकारा पाएंगे।

12. क्षेत्र तीर्थों की आवश्यकता

वेंकटाचल में बहुत सारे दिव्य तीर्थ हैं, जो दिव्यौषधियों के लिए भी प्रसिद्ध हैं। बहुत सारे महर्षियों के वाक्य इसके प्रमाण हैं। मात्र मनोल्लास के लिए ही नहीं, बल्कि श्रद्धा, भक्ति, पारमार्थिक विश्वास तथा सबर से हम इन तीर्थों के दर्शन तथा सेवा करेंगे तो इनकी महिमा अनुभव में आएगी। जिस तरह, एक दिन के अभ्यास से कोई योद्धा नहीं बन सकता, इसी तरह एक दिन के स्नान से इन तीर्थों की

महिमा को जानना असंभव है। इन तीर्थों के दर्शन के समय, मन की शुद्धि, परिसरों की शुद्धि के साथ यात्रा में उथल-पुथल का भी सामना करते हुए भगवन्नाम के निरंतर मनन को ध्यान में रखना है। अगर इस तरह इनका दर्शन भक्त लोग करेंगे तो पुराणों का कहना है कि वे भगवान की कृपा के पात्र बनेंगे। पवित्र गौ माता का दूध चम्मच भर भी पीने को मिले तो भी वह सौभाग्यदायी ही है न? भक्ति से परोसा गया आहार मुट्ठी भर मिले तो भी काफी है। ऐसे उपदेश हमारे जीवन को सही रास्ते पर ले चलने वाले मन्त्र ही हैं। पुराण व उपनिषदादि कहते हैं कि इन महा वाक्यों के सहारे, मानव सेवा को ही माधव सेवा मानते हुए जीवन बिताना ही सफल जीवन है।

हर पुण्य क्षेत्र जाकर उनके दर्शन न कर सकने पर भी, उनकी गाथाओं को सुनना, मनन करना भी पुण्यप्रद तथा कामितार्थदायी ही है।

इस कलियुग में मानव कल्याण के लिए महर्षी बहुत सारे साधनों की निधि हमें सौंप गए हैं। उनमें पुराण अति मुख्य हैं। उनमें जो सूक्तियाँ हैं, उनका अनुसरण करके हमारे पूर्वज लाभान्वित हुए हैं। कलियुग पापों से भरा है। इस कीचड़ से हमें मुक्त करने के लिए ही हमारे देश में ऐसे कई नदी नद व तीर्थ हैं।

गंगा, यमुना तथा उनकी उप नदियाँ, सिंधु, ब्रह्मपुत्रादि दिव्य नदियाँ, गौतमी, कृष्णा, तुंगभद्रा, कावेरी, पिनाकिनी आदि दक्षिण भारत की नदियाँ - ये सभी मुक्तिदायी ही हैं न? इसमें अतिशयोक्ति बिलकुल नहीं है।

तिस पर गौरी शंकर से लेकर कन्या कुमारी, रामेश्वरम तक कई पुण्य क्षेत्र भी हैं। यह बात सही है कि किसी जादुई लेप के बिना हम

इन सभी पुण्य क्षेत्रों के दिव्य दर्शन कर नहीं सकते हैं। इसीलिए श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने बहुत ही क्षणिक सांसारिक आशाओं और आकांक्षाओं से दूर कर हमें स्थिरता देने के लिए ही श्री वैकुण्ठ से यहाँ वेंकटाचल पर स्वयं आ बसकर, तीर्थ क्षेत्र सेवा तथा संदर्शन भाग्य को प्रदान कर रहे हैं। यह अक्षरशः सत्य है।

भगवान के अस्तित्व को मानते हुए चलने से ही फल प्राप्ति होगी। इसीलिए तीर्थ क्षेत्रों के दर्शन को पवित्र भाव से लेते हुए, मानव जन्म के लिए लाभदायक मानते हुए ही आगे बढ़ना ही लोक कल्याण का मार्ग है।

पुण्यं पवित्रमायुष्यम माहात्म्यमिद मुत्तमम्
यः पठेत प्रयतो भक्त्या शृणुयाद्वा लिखेदपि
सर्वान् कामानवाप्नोति संप्राप्नोति च मंगलम् (वराह पुराण)

इति श्री श्रीनिवास पादारविन्द ध्यानामृतास्वादन मत्त चित्त, श्री ज्ञान प्रसुनाम्बिका सहित श्री कालहस्तीश्वरानुग्रह लब्ध कविता विशेष, श्री कैलास वास चिंतना मानस सरोवर विहार मराल मिथुन लक्ष्यार्थ, लक्ष्मी नरसांबा द्वितीय पुत्र श्री वेङ्कट कृष्णार्यानुज, बुध विधेय, गुंटकट्टा भाषा कोविद श्रीमान पुट्टपर्ति नारायणाचार्यस्य पुत्री सुक्षी नाग पद्मिनी द्वारा हिंदी भाषाया अनूदित तिरुमल तिरुपति क्षेत्र माहात्म्य नाम काव्ये प्रथमास्वासम् सम्पूर्णम!!!!!

* * *

द्वितीय अध्याय

1. श्री वेंकटाचलपति का आविर्भाव

कृते तु नरसिंहो भू त्रेतायां रघुनंदनः
द्वापरे वसुदेवश्य कलौ वेङ्कट नायकः

पुराणों का कथन है कि चारों युगों में प्रजा की रक्षा के लिए या भूदेवी के उद्धार के लिए भगवान विष्णु भूलोक पर अवतरित होकर सज्जनों की रक्षा तथा दुष्टों का दमन करते हैं।

कृत युग में भक्त प्रह्लाद की रक्षा हेतु श्रीहरि नरहरि के रूप में अवतरित हुए और हिरण्यकश्यप का वध कर प्रह्लाद को उन्होंने बचाया।

त्रेता युग में श्रीनिवास भगवान, श्रीराम बनकर दशरथ महाराजा के घर पैदा हुए। मुनियों और महर्षियों को सता रहे राक्षसों का वध करके प्रजा को उन्होंने आनंदित किया। बाद में राक्षसों के नायक और लंका के राजा रावण का भी संहार कर, लोगों को सन्देश दिया कि अन्यों की पत्नियों को अपमानित करना महा पाप है। इसके अलावा गुरु भक्ति, पितृ वाक्य का अनुसरण, एक पत्नी व्रत, आश्रितों की रक्षा, दीन जनों को आसरा देना - इन सभी गुणों को अपनाने के द्वारा संसार को सामाजिक धर्मों की प्रधानता को उन्होंने स्वयं बताया। चित्रकूट में भरत को राज्य तथा राजनीति से संबंधित विविध सूक्ष्मों को भी उन्होंने बताकर, अपनी राजनीतिक दृष्टि को साधारण जनता के सामने स्पष्ट किया। उनके अनुसार ही स्वयं चलकर दूसरों को भी उसी तरह चलने का सन्देश दिया।

श्री राम के अवतार में मानव के धर्मों को स्पष्टतया अपने आचरण में ही दिखाने के कारण ही आज भी श्रीराम अत्यंत भक्ति व श्रद्धा से पूजे जा रहे हैं। मानव के रूप में धर्म का कठिन अनुसरण करने के कारण ही श्रीराम अभी सज्जनों के हृदयों में जीवित हैं।

द्वापर युग में आगामी कल युग के लक्षणों को पहचानकर, श्री महा विष्णु, श्री कृष्ण बने। गोपालक बने। बचपन में ही गर्वांधकार से व्यवहार करनेवालों को सही रास्ता उन्होंने दिखाया। अत्यंत क्रूर स्वभाव वाले कंस का वध कर संसार की रक्षा की। अकारण अपने चरित्र पर पड़े अपवाद को असत्य साबित कर सर्व मानव जाति को सत्य की सत्ता बताया। पांडव और कौरवों का समीप बंधू होते हुए अपनी राजनीतिक कुशलता के द्वारा धर्म की रक्षा की तथा उसे ही अपना परम लक्ष्य बताया। कुरु पांडवों की युद्ध भूमि कुरुक्षेत्र में अर्जुन को उन्होंने क्षत्रीय धर्मों को बताते हुए सकल मानव कल्याण के रहस्य को गीतोपदेश द्वारा सुनाया। कृष्ण ने यह भी स्पष्ट किया कि मनु वंश के वारिस मानवों की जीवन रीति कैसी हो? धर्म का स्वरूप क्या है? 'धर्म एव जयते' नामक सत्य का प्रचार प्रसार कैसे करें? कलियुग के दुष्प्रभाव को पहले ही पहचानकर द्वापर युग में ही उन दुष्प्रभावों का सामना करने के उपाय उन्होंने बताये। सज्जनों की रक्षा तथा दुर्जनों को दंड - इसी लक्ष्य को अपना कर्तव्य बनाकर, उन उन अवतारों में श्रीमहाविष्णु ने उचित रीति का अनुसरण किया। श्रीराम तथा कृष्ण के रूप में मानवों को उन्होंने अच्छे संस्कार सिखाये।

अपने व्यवहार से श्रीराम ने, अपने गीतोपदेश से श्रीकृष्ण ने, मानवों को आदर्श के पाठ पढ़ाये। दोनों चिरंजीवी हो गए। वे आदर्श ही अभी भी हिन्दू संस्कृति की कालातीत ज्योतियाँ हैं।

पुराणों में बताया गया कि ब्रह्म देवता, सृष्टि, स्थिति, लयात्मक लोक की सृष्टि करता है। विष्णु देवता उस लोक का पोषण करता है तथा शिव उसका लयकार है। विष्णु अपने कर्तव्य व धर्म का पालन करने के लिए ही इस धरा पर अवतरित होते हैं।

महा विष्णु जानते हैं कि कलियुग में धर्म एक ही पग पर चलता है। इसीलिए उन्होंने अपनी नगरी की क्रीडाद्रि को भूलोक पर गरुड़ के द्वारा लिवा लाया जो वेंकटाद्रि के नाम से बहु प्रचलित क्षेत्र हो गया। उस वेंकटाचल के स्वामी ही श्री वेंकटेश्वर हैं जिनकी प्रशंसा 'कलौ वेंकट नायकः' के रूप में पुराणों ने की।

पुराणों के अनुसार, इस वेंकटाचल के चारों युगों में चार अलग नाम थे। कृत युग में भूदेवी की रक्षा करने हिरण्याक्ष का वध, श्वेत वराह रूप में करने के बाद, वेंकटाचल पर ही वे रह गए। फिर त्रेता युग में दुष्टों को दंड देने के लिये दशरथ के पुत्र राम बनकर वे धरा पर आये। पुराणानुसार श्री महाविष्णु के परिवार जन ही उनके भाई भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न बनकर आये थे। पुराणों में कहा गया है कि दशरथ तथा राम भी वेंकटाचल के दर्शन के लिए आये थे और द्वापर युग में श्री कृष्ण ने स्वयं पांडवों को वेंकटाचल पर स्थित तीर्थों के दर्शन करने भेजा था। इस कारण, विदित हो रहा है कि कृत, त्रेता, द्वापर युगों में भी वेंकटाचल पवित्र तथा प्रसिद्ध क्षेत्र था। कलियुग में तो वेंकटाचल पर स्वयं श्री महाविष्णु ही आकर आनंदनिलय में

निवास कर रहे हैं। भूलोक वैकुण्ठ के नाम से विख्यात तिरुमल में अपने भक्तों को दर्शन का भाग्य प्रदान कर रहे हैं।

द्वापर युग में देवकी के पुत्र को अपने ही बेटे के समान यशोदा ने पाला पोसा। लेकिन उसका पुत्र प्रेम तृप्त नहीं होने के कारण, श्री कृष्ण से उसने वरदान माँगा कि फिर से उसकी माँ बनने का अवसर प्रदान करें। इस तरह वेंकटाचल में वकुला माता के रूप में, यशोदा, वराह स्वामी की पूजा अर्चना कर रही थी।

वेंकटाचल, आनन्द तथा ऐश्वर्य प्रदान करनेवाला अमृत क्षेत्र है। इसी क्षेत्र पर वेंकटचलपति के रूप में अवतरित होकर कुछ दिनों के लिए एक वल्मीक में अज्ञात जीवन बिताने के बाद, स्वामी ने आकाश राजू की पुत्री पद्मावती से ब्याह रचाया। सुवर्ण मुखी नदी के तट पर अगस्त्याश्रम के सामने (वही आज कल श्रीनिवास मंगापुरम के नाम से विख्यात है) कुछ दिन अर्धांगिनी के साथ रहकर फिर तिरुमल पर तोंडमान राजा द्वारा निर्मित आनंद निलय में स्थिर निवास करते हुए भक्तों की रक्षा वे कर रहे हैं। उस स्वामी की लीलायें, उनसे जुड़ी हुई गाथाएँ तथा भक्तों के जीवन के बारे में लिखने-पढ़ने व सुनने वाले भक्त, भगवान वेंकटेश्वर की दया अवश्य पाएँगे। चोल राजाओं का इतिहास तथा तत्कालीन भक्तों की गाथाएँ ही इसके अनेक प्रमाण हैं। वेंकटचलपति को प्रत्यक्ष देवता के रूप में सिद्ध करने के लिए अनेक भक्तों के जीवन आगे वर्णित हैं।

श्रीकृष्णावतार के समाप्त होने के बाद से कलियुग का प्रारम्भ हो गया। कलुषित कलियुग में मानव, स्वार्थ बुद्धिवाले, आध्यात्मिक सोच ने होनेवाले, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य के प्रभाव से लोभी, पाप का भय न होनेवाले, गुरु, बुजुर्ग, माता पितादियों के प्रति

आदर सम्मान न होनेवाले, सदाचारों से दूर रहने वाले, सत्य, धर्मादियों से न डरनेवाले, उपकार करनेवालों को ही द्रोह करनेवाले, अन्याय को न्याय सिद्ध करनेवाले, रिश्वत लेनेवाले, स्थिर बुद्धि न होने वाले होते हुए मुक्ति से दूर होंगे। इस सत्य को पहले ही पहचानकर सृष्टिकर्ता ने अपने मानस पुत्र नारद को पास बुलाया।

नारद को उन्होंने कलियुग के लक्षण बताकर, मानव कल्याण के लिए वैकुण्ठ नाथ के धरा पर अवतरित होने का उपाय सोचने को कहा।

उस समय भगवान विष्णु, अपनी शेष शय्या पर लेटकर, योग निद्रा में डूबकर कलियुग में मानव कल्याण के बारे में मार्ग ढूँढ़ रहे थे।

2. महर्षियों का यज्ञ, त्रिमूर्तियों में सत्वगुण संपन्न देवता के लिए भृगु की खोज

कलियुग का प्रारम्भ राक्षसों के क्रूर कृत्यों से ही होने के कारण, अशांति के वातावरण में, प्रजा भय से कम्पित हो रही थी। इस स्थिति को, कलि पुरुष की विकृत चेष्टा मानकर महर्षियों के समूह ने शांति की स्थापना के लिए गंगा के किनारे नैमिशारण्य में समाविष्ट होकर महा यज्ञ का निर्वाह करने का निर्णय ले लिया।

अब उनके मनों में एक ही चिंता थी कि इस यजन के यज्ञ भोक्ता कौन रहेंगे? ठीक उसी समय नारद वहाँ आ पहुँचे। सभी मुनि, उनका स्वागत सत्कार कर, यजन करने के अपने विचार को प्रकट कर, यजन भोक्ता की खोज के बारे में पूछताछ वे सभी करने लगे। तब नारद जी ने कहा, 'इस कार्य के लिए सभी देवताओं में से

सर्वश्रेष्ठ सत्व गुण संपन्न देवता ही सही होगा।' झट मुनियों ने नारद जी को ही बताने की प्रार्थना की। नारद ने कहा, 'अत्रि, वशिष्ठ, भृगु आदि महानुभाव हैं न? उनके सामने मैं अल्प जीवी हूँ। आपमें से कोई एक, इस कार्य का उत्तरदायित्व लेकर, तीनों लोक घूमकर, सर्वश्रेष्ठ सत्व गुण संपन्न देवता का चयन कीजिये।' और वहाँ से नारद चले गए। सभी महर्षियों के काफी देर तक चर्चा के बाद भी उनके लिए यह निर्णय लेना मुश्किल हो गया कि इस कार्य का भार कौन लेंगे? आखिर भृगु महर्षि इस कार्य भार को निभाने के लिए तैयार हो गए।

पहले वे सत्य लोक पहुँचे। वहाँ ब्रह्म देवता, चारों मुखों से वेदों का पारायण कर रहे थे। वाणी उनके सामने बैठकर वीणा का अभ्यास कर रही थीं। अष्ट दिक्पालकादि देवता वृन्द उनके आसपास आसीन होकर ब्रहा जी का वेद प्रवचन, भक्ति एवं श्रद्धा से सुन रहे थे। इस भरी सभा में भृगु प्रवेश कर, एक कोने में खड़े होकर एकटक दृष्टि से देख रहे थे कि ब्रह्म देवता इशारे से मुझे गौरवपूर्ण सभा में आह्वानित करेंगे। लेकिन ब्रह्म देवता, अपने प्रवचन में इतने तल्लीन थे कि उन्होंने इनकी तरफ देखा तक नहीं। अन्य देवता वृन्द में से किसी एक ने भी उन्हें आह्वानित नहीं किया। इस कारण ब्रह्म देवता को पूजा के लिए अयोग्य निर्धारित कर, भृगु वहाँ से चल पड़े।

वहाँ से भृगु कैलास पहुँचे जहाँ भृंगी, नंदी, अन्य प्रमथ गण ईश्वर का सानंद स्तुति गान कर रहे थे। भृगु भी प्रसन्न चित्त हो, ईश्वर की सन्निधि में जा पहुँचे। वहाँ, शिव जी और पार्वती, विनोद लीला में मग्न थे। पार्वती ने भृगु महर्षि को देखकर शिव जी को इशारे से बताया कि भृगु आ गए हैं। लेकिन शिव जी ने कुपित दृष्टि से

उनकी तरफ देखा कि अपनी इस एकांत वेला में, भृगु यहाँ तक क्यों और कैसे आ गए? इसे देखकर भृगु ने सोचा कि अब यहाँ रहना उचित नहीं है और वहाँ से वे तत्क्षण निकल पड़े।

सत्य लोक तथा कैलाश में अपने लक्ष्य के लिए उचित वातावरण न पाकर भृगु निराश थे। लेकिन वैकुण्ठ को जाना ही तो है। किसी तरह वे वहाँ पहुँच गए जो विष्णु भक्तों के भजन कीर्तन से प्रतिध्वनित हो रहा था। भृगु सत्य लोक तथा कैलाश में अपने अनुभव को याद करते हुए विष्णु भवन के ऊपरी भाग तक पहुँच गए। वहाँ तो सन्नाटा ही सन्नाटा है। विष्णु शेष शय्या पर सोने की मुद्रा में थे। लक्ष्मी उनके पद तल पर बैठकर पाँव दबा रही थी। भृगु ने सीधे विष्णु की तरफ चलकर उनके वक्षस्थल पर वाम चरण से धक्का मारा। महा विष्णु ने सोचा कि भृगु का आगमन अपनी कार्य सिद्धि हेतु ही है। और झट नींद से उठकर, उन से क्षमा याचना की। 'हे मुनि श्रेष्ठ! मुझे क्षमा करें। आप जैसे तपोधन के यहाँ आने पर भी नींद में होने के कारण, मैं आप का आदर सम्मान नहीं कर सका। आपकी चरण धूलि अति पवित्र है। मैं तो धन्य हुआ। लेकिन मेरे कठिन वक्षस्थल से लगकर आपके कोमल चरण में कहीं चोट तो नहीं पहुँची? तनिक देखने दीजिये।' इस तरह विनय भरी बातें कहते हुए विष्णु ने उनके वाम चरण को अपने हाथों में ले लिया और उनके उस पाँव के नीचे जो तीसरी आँख है, उसे कुचल डाला। सहनशीलता से सम्पन्न न होनेवाले कार्य आखिर क्या होते हैं? भृगु तो श्री महाविष्णु की विनय भरी बातों से आनंदित तो हो गए। लेकिन कलियुग में लोकों की रक्षा के रहस्य को पहचान नहीं सके। किसी कार्य को विजय की तरफ बढ़ाने के लिए विष्णु की तरह निश्चित हृदय से आगे बढ़नेवालों को विनम्रता से क्या-क्या करना पड़ता है न? अपने

वक्षस्थल पर लात मारे हुए मुनि के चरणों को, विनम्रता से हाथों में लेकर उन्हें जल से धोकर उस जल को अपने सर पर धरते हुए विष्णु भगवान ही इसके प्रमाण हैं। भृगु ने तो अत्यंत आनंद से वैकुण्ठ वासी पर प्रशंसा की वर्षा की और आज्ञा लेकर वहाँ से सीधे नैमिषारण्य पहुँचे।

उन्हें देखते ही महर्षियों ने मुक्त कंठ से कहा, 'हे मुनिवर! आपको देखते ही हमें लगा कि आपका कार्य संपन्न हुआ। लेकिन आपके द्वारा सुनने को हम तरस रहे हैं।' भृगु ब्रह्म देवता और शिव के साथ अपने अनुभवों को विस्तारपूर्वक बताने के बाद, वैकुण्ठ में विष्णु की परीक्षा लेने का क्रम, उसका परिणाम आदि भी नाटकीय ढंग में रोचक रीति में बताया।

हरिः सर्वोत्तमः साक्षात् रमा देवी तदंतरा
तदधो विधि वाण्यौ च तदधः शर्व पूर्वकाः

भृगु के वचनों से सभी महर्षि अत्यंत हर्षित हो गए। उन सबों ने मिलकर प्रकट किया कि महाविष्णु ही सर्वोत्तम देवता हैं। त्वरित रीति से यज्ञ का निर्वाह कर विष्णु को ही याग फल को उन्होंने समर्पित किया।

3. लक्ष्मी देवी का कोल्हापुर जाना

महाविष्णु वैकुण्ठ में खुश थे कि भृगु महर्षि के इस आगमन से, अपने माया नाटक की परिसमाप्ति-सी हो गयी है। लेकिन लक्ष्मी देवी को लग रहा था कि भृगु महर्षि के आगमन से उसका अपमान हुआ है। इस कारण वह मौन धारण करके बैठी थी। महाविष्णु तथा लक्ष्मी देवी के बीच वार्तालाप कुछ इस प्रकार हुआ।

'हे देवी! मुझे लग रहा है कि आप किसी बात पर चिंतित हैं।'

स्वामी! मैं अपने अपमान से चिंतित हूँ।'

'कैसा अपमान?'

'अपमान नहीं तो और क्या? आप जैसे देवता पर इतना दुस्साहस?'

'नहीं देवी! उस महर्षि का उद्देश्य वह नहीं था।'

'क्या?'

'घर पधारे हुए अतिथि का सत्कार करना गृहस्थी का कर्तव्य है न?'

'खैर, मेरे सामने ही आपके साथ इस तरह का व्यवहार अनुचित है न?'

'माता पिता जब अपने दुलारे से खेल रहे हों तो इस तरह के उपहार बच्चों से मिलना उनके लिए अत्यंत सहज तथा प्रिय ही होंगे न?'

'नहीं, मुझे तो लग रहा है कि मेरे किसी पुराने पाप का फल इस तरह, मेरे निवास में, मेरे सामने, मेरे पति के अपमान के रूप में परिणमित हुआ है। इसको मैं सहन नहीं कर सकती हूँ। मेरा सर फटा जा रहा है। एकांत में तप करने से ही मुझे शांति मिलेगी। हे नाथ! आप तो सकल लोकों के रक्षक हैं। आप तो इसे सह सकते हैं। मैं अशक्त हूँ। क्षमा कीजिये, अब इस वैकुण्ठ में मैं नहीं रह सकती। अभी जा रही हूँ।'

'हे देवी! इतनी चिंता क्यों? मुझे सर्वान्तर्यामी मानो बस! मेरे ही भक्तों को मैं छोड़ नहीं सकता। वे हमारी संतान हैं। मेरे विश्व कल्याणकारी विचारों की परिकल्पना वे करते रहते हैं। महर्षियों की सहायता तो हमेशा रहती ही है।'

'शायद होगा। लेकिन इस अपमान को सहना मेरे बस की बात नहीं है। प्रशांत चित्त से एकांत में तपस्या ही छुटकारा पाने का एकमात्र उपाय लग रहा है। सारे संसार का भार वहन आप अनायास करते ही रहते हैं न? आपके लिए यह शायद आसान ही है।'

'हाँ, तुमने ठीक ही कहा है। तुम्हारे सहयोग से ही मैं इस जगत का भार वहन कर रहा हूँ। यह तुम्हें पता है ही।'

'हाँ, सो तो है। लेकिन मेरा मन तो अभी भी चिंतित है। मेरी प्रार्थना को स्वीकारो। मैं वैकुण्ठ से जा रही हूँ, कोल्हापुर में रहने के लिए!'

इस तरह महाविष्णु तथा लक्ष्मी के बीच वाद प्रतिवाद होने के बाद, लक्ष्मी करवीर पुर चली गयी।

4. महाविष्णु का वैकुण्ठ को छोड़कर वेंकटाचल पर आना

गृहिणी के बिना घर सूना होता ही है। वह घर की ज्योति है। ज्योति के बिना घर कितना भी बड़ा हो, अंधकारमय होता है। पुरुष की सारी सुविधाएँ उसकी पत्नी की जिम्मेदारी ही हैं। वही सब कुछ संभालती है। पत्नी के बिना पुरुष मतिहीन हो जाता है। पत्नी सहधर्म चारिणी बनकर इहलोक तथा परलोक के सुखों को उसे दिलाती है। आदर्श गृहस्थी के नियमों का पालन महाविष्णु को भी करना इस

तरह पड़ा। मानव को सद्धर्मों का अनुसरण करने में इस तरह का मार्ग दर्शन भी भगवान को आनंद दायक ही है।

महाविष्णु वैकुण्ठ को छोड़कर, अकेले धरा पर भटकते हुए लक्ष्मीदेवी को मनाने के उपाय के बारे में सोच रहे थे। थोड़े दिनों के बाद वे गंगा नदी के तीर पर पहुँच गए। वहाँ भी शान्ति न मिलने के कारण, दक्षिण की तरफ चलकर विंध्य पर्वतों को पार कर गोदावरी, पिनाकिनी, कृष्णा नदियों से होते हुए स्वर्ण मुखरी नदी की उत्तर दिशा में स्थित वेंकटाचल पहुँच गए। वहाँ की प्रकृति बहुत ही शांतिदायक है। इस कारण उसी प्रांत से चलते-चलते स्वामी पुष्करिणी के पास वे आ गए।

वहाँ हरिण स्वेच्छा विहरण कर रहे हैं। विविध पक्षियों की मीठी बोलियाँ बहुत ही आनंद प्रदान कर रही हैं। अनेक फलों के बड़े पेड़, फूल भरी लताएँ, उस प्रांत की सुंदरता को बढ़ा रहे हैं। इस कारण वहाँ उन्हें अत्यंत शांति मिली। वे वहीं रहने के लिए जगह ढूँढ़ने लग गए। उन्होंने देखा कि पुष्करिणी की दक्षिण दिशा में बहुत बड़ा इमली का पेड़ है। उसके नीचे एक बिल भी है। उस बिल में प्रवेश करने के लिए द्वार भी है। विष्णु को लगा कि यही मेरे रहने के लिए उचित स्थान है। सानंद वे उसमें प्रवेश कर गए और तपोनिष्ठा में डूब गए।

5. चोल राजा तथा गो वृत्तांत

वैकुण्ठ को छोड़कर भूलोक में, वेंकटाचल पर एक वल्मीक में तपस्या कर रहे महाविष्णु के बारे में मुनियों को मालूम होते ही शिव जी के नेतृत्व में वे सब सत्यलोक चले गए। ब्रह्म देवता को महाविष्णु की घोर तपस्या के बारे में बताकर शिव जी ने इसका कारण पूछा। ब्रह्मा ने बताया कि जगत की रक्षा करने वाले विष्णु, कलियुग के

पापों से लोगों की रक्षा करने हेतु, धरा पर पुण्य भारत देश के दक्षिण प्रांत में वेंकटाचल पर तपस्या कर रहे हैं। सकल लोगों के नाते, भगवान विष्णु के कार्य में अपना सहयोग देना आवश्यक है। मैं गौ माता बनूँगा। आप गोवत्स बनिए। हे सूर्य देव! करवीर पुर में स्थित महा लक्ष्मी को भी यह वृत्तांत सुनाकर, उन्हें बताना कि इस गाय तथा बछड़े को याने कि हमको, यादव स्त्री के रूप में उन्हें वेंकटाद्रि प्रांत के चोल राजा के पास ले जाकर उन्हें किसी तरह बेचना ही होगा! यह वैकुण्ठ वासी स्वामी का ही कार्य है, लोकों की रक्षा के लिए कहकर, उनकी सहायता की प्रार्थना कर आप को उन्हें लाना होगा।' सूर्य देवता झट करवीर पुरम चले गए, लक्ष्मीदेवी को इस देव कार्य के लिए मनाकर, लाने के लिए! वे जैसे ही लक्ष्मी देवी के साथ आये, तब तक ब्रह्म देवता तथा शिव जी तैयार थे, गौ और गो वत्स के रूप धरकर! लक्ष्मी देवी, सुन्दर यादव वनिता बन, गो और उसके वत्स के साथ नारायण पुरम में राज भवन के पास पहुँची। राज भवन के कर्मचारी ने इस समाचार को राजा तक पहुँचाया। राजा बाहर आया। लक्ष्मी देवी को मूल्य चुकाकर, गो और गो वत्स को राजा ने खरीद लिया। उन्हें अपनी गोशाला में भेजा उनकी अच्छी देखभाल करने के लिए! गोपालक उन्हें भी अन्य गायों के साथ वेंकटाचल के जंगलों में चराने के लिए ले जाता था। अच्छी तरह अटवी में घास तथा पेड़ों के पत्ते खाकर गो माता अधिक दूध दे रही थी। उसका बछड़ा भी माँ का दूध पीकर और घास फूस खाकर, उत्साह से इधर-उधर छलांग मारते घूम रहा था। जिसे देखकर रानी और परिवार जन भी बहुत खुश होते थे। यह चोल राजा बहुत ही गुणवान, नीतिवान तथा दयावान था। प्रजा की अच्छी देखभाल करता था। देश में हरियाली ही हरियाली थी। पानी और घास की कमी नहीं थी जिस कारण गो सम्पदा की

सदा वृद्धि ही थी। फसल की वृद्धि के कारण प्रजा भी आनंद से जीवन बिताती थी। आपस में मिल-जुलकर रहती थी। अतिथि अभ्यागत की सेवा करती थी। बड़ों का आदर सम्मान, माता-पिता के प्रति भक्ति, गरीबों के लिए करुणा, पुण्य कार्यों के प्रति उत्साह, सत्य वचन तथा पाप भीति आदि गुणों से राजा की ख्याति को भी प्रजा बढ़ा रही थी।

गोपालक नयी गाय को गोशाला में अलग से रखता था। पहले उसका दूध राज भवन में भेजकर, बाद में बछड़े को पेट भर माँ का दूध पिलाता था। तदनंतर अन्य गायों के साथ अटवी प्रांतों में चराने ले जाता था। कुछ दिन बाद, यह गाय बाकी गायों से अलग हो जाती थी और सीधे उस वल्मीक के पास जाकर वहाँ वास कर रहे श्री महाविष्णु को अपने स्तनों से, वहाँ के विवर के द्वारा दूध छोड़कर, फिर वापस अन्य गायों के पास आती थी। गाय ठीक से दूध न देने के कारण कुछ दिन बाद बछड़ा कमजोर होता गया। यह समाचार रानी तक पहुँचा। एक दिन राणी ने गोपालक को बुलाया और कारण पूछा। गोपालक ने कहा कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। लेकिन रानी न मानी और कहा, 'हम नहीं मानते। तुम्हें इसकी जिम्मेदारी लेनी ही होगी।' गोपालक अब सतर्क हो गया। जंगल में जाने के बाद इसी गाय की तरफ गौर से देखता रहा कि 'आखिर यह यहाँ क्या कर रही है? वहाँ दूध ही नहीं दे रही है राज भवन में?' गाय तो वल्मीक के पास पहुँचकर विवर से दूध छोड़ ही रही थी कि गोपालक ने नाराज होकर अपने हाथ से कुल्हाड़ी को गाय पर फेंका। इसे देखकर गाय को कुल्हाड़ी से बचाने के लिए वल्मीक में वास कर रहे श्रीनिवास झट से ऊपर उठे। मार उनके सर पर जोर से लगी। खून बहने लगा। यह सब देखकर गोपालक घबरा गया और नीचे गिरा। गाय, वल्मीक,

उसमें से निकले श्रीनिवास जी, खून की नदी - यह सब देखते ही डर के मारे उसके प्राण पखेरु उड़ ही गए। गाय भी घबराकर, नारायण पुरम की तरफ दौड़कर चली गयी।

6. गाय के पीछे चोल राजा का वेंकटाचल अटवी में आना, श्रीनिवास का उसे श्राप देना आदि

गाय अम्भा रव के साथ राज मंदिर में आ पहुँची। राजा के पास ही खड़े होकर सर हिला रही थी मानो अपने साथ चलने का इशारा दे रही हो। राजा उसके साथ चला। गाय आगे और राजा पीछे! जंगल में ठीक उसी जगह पर ले गयी जहाँ यह घटना घटी थी। राजा ने देखा कि गोपालक मरा पड़ा हुआ है। गोपालक के शरीर पर कोई चोट या घाव तक नहीं है। लेकिन खून की नदी बह रही है। यह कैसे? राजा अचरज में पड़ गया कि यह सब क्यों और कैसे हुआ। इतने में श्रीनिवास वल्मीक से बहार निकले। राजा की तरफ देखते हुए उन्होंने क्रोध भरी आवाज में कहा, 'हे राजन! तुम बड़े ही पापी हो। घमंडी हो। मैं बिना माता-पिता के, स्वजनों को खोकर, कष्टों को सह रहा निरपराधी हूँ। इधर वास कर रहा हूँ। मुझ अभागे को तुमने अपने गोपालक से कुल्हाड़ी से मरवाया। देखो, मेरा सर फटा है। परिवार के लोगों के दुष्कृत्यों का फल उस परिवार के स्वामी को तो भोगना ही होगा। मात्र भोगों के लिए नहीं, प्रजा की गलतियों के दोषों का भी वहन करना पड़ता है उसे! इस कारण तुम्हें पिशाच बनना ही होगा अब!'

इस अकारण वज्रपात से राजा सुध-बुध खो बैठा। थोड़ी देर बाद होश में आने के बाद उसे मालूम हुआ कि वल्मीक से प्रत्यक्ष हो गए देवता, साक्षात् श्री महाविष्णु ही हैं। पछतावे के साथ उसने कहा, 'हे

स्वामी! त्रिलोक नाथ! मैं कुछ नहीं जानता। यह गोमाता मेरे पास आकर, रम्भाते हुए मुझे यहाँ ले आयी। मुझे तो आश्चर्य हुआ। लेकिन यहाँ आने के बाद यह सब देखकर अवाक् हो गया। आपके द्वारा ही इस घटना की सम्पूर्ण जानकारी मिली है मुझे! मुझ दीन की क्षमा कीजिये!' करुणा भरी इन बातों को सुनकर श्रीनिवास स्वामी ने उस पर तरस खाकर कहा, 'हे सुवीर! तुम्हारे पूर्व जन्मों के पुण्य के कारण ही तुझे मेरा दिव्य दर्शन हुआ है। तुम्हारे पूर्वज तथा चंद्र वंश के राजा पांडव मेरे लिए अत्यंत प्रीतिपात्र थे। लेकिन मैं अपने श्राप को मैं वापस ले नहीं सकता। पिशाच बनकर रहना ही पड़ेगा तुम्हें! कुछ दिन बाद इस स्वामि पुष्करिणी में स्नान करने से तुम श्राप से मुक्त हो जाओगे। तुम्हें सुधर्म नामक बेटा होगा। उस सुधर्म को आकाश राजू और तोंडमान नामक पुत्र होंगे। आकाश राजु की पुत्री से मैं ब्याह करूँगा। तुम पुण्य लोकों को सिधारोगे।' सुवीर राजा इन बातों से संतुष्ट हो गया। गो माता और वत्स भी ब्रह्मा और शिव के रूप धरकर वापस अपने-अपने लोक चले गए। इधर सुवीर राजा ने पिशाच रूप में वेंकटाद्रि पर ही कुछ साल वास करने के बाद, पुष्करिणी में नहाकर, श्राप विमोचन से पुनः पूर्व रूप पाया। फिर से राजा बन प्रजा की सम्मति से पालन किया। उसे पुत्रोदय हुआ। उसे पूर्व सूचनानुसार, सुधर्म का नाम रखा गया। पाण्ड्य राजा की पुत्री मनोरमा से उसकी ब्याह रचाई। वेंकटाचल पर खुद तपस्या करते-करते आखिर पुण्य लोकों को सिधारा।

7. वराह स्वामी से श्रीनिवास की भेंट, श्रीनिवास की सेवा में वकुल मालिका

चोल राजा के चले जाने के बाद श्रीनिवास ने बृहस्पति का स्मरण किया। देव गुरु झट आ गए। उन्हें अपना चोट दिखाकर

श्रीनिवास ने उसकी चिकित्सा का उपाय बताने को कहा। बृहस्पति ने कुछ जड़ी बूटियों को लाकर उनका चूर्ण बनाया। उसी चूर्ण को कपास की पट्टी बनाकर घाव पर डाला और बताया कि इस तरह इसी चूर्ण का उपयोग करते रहें तो कुछ दिन बाद घाव गायब हो जाएगा। श्रीनिवास की आज्ञा लेकर बृहस्पति अन्तर्निहित हो गए।

एक दिन श्रीनिवास वेंकटाद्रि के जंगलों में जड़ी बूटियों की खोज कर रहे थे कि वराह स्वामी ने उन्हें देख लिया। तब तक वे दुष्ट राक्षसों का वध कर चुके थे। वराह स्वामी ने उनसे पूछा कि 'तुम कौन हो?' श्रीनिवास बिना जवाब दिए अपने वल्मीक में चले गए। खूब विचार विमर्श के बाद वराह स्वामी को अवगत हुआ कि यह श्रीनिवास ही श्री महाविष्णु है। वराह ने स्वामी वल्मीक के पास जाकर श्रीनिवास को बाहर आने को कहा। वल्मीक में बैठे श्रीनिवास को भी मालूम हुआ दो भिन्न रूपों में देखते हुए आकाश के देवताओं ने उनकी स्तुति कर, सहर्ष फूलों की वर्षा की।

तदनंतर, वराह स्वामी ने श्रीनिवास से वैकुण्ठ को छोड़कर धरा पर आने का कारण पूछा। तब भगवान विष्णु ने भृगु महर्षि के वैकुण्ठ में आगमन से लेकर लक्ष्मी देवी के करवीरपुरम जाने तक का वृत्तांत, अकेले अपने धरा पर आकर पत्नी वियोग में दर-दर भटकना, उत्तर से दक्षिण भारत में यहाँ वेंकटाचल पर आकर यहाँ की प्रकृति की सुंदरता को देखते हुए शान्ति को पाना, चोल राजा का वृत्तांत - सब कुछ उन्हें बता दिया। सब कुछ सुनने के बाद वराह स्वामी ने पूछा। 'हे श्रीनिवास! आप यहाँ कब तक ठहरेंगे?' श्रीनिवास ने बताया, 'कलियुग के अंत तक।' इसे सुनकर वराह स्वामी ने कहा, 'आपकी बातों से लग रहा है कि कलियुग के मानवों को कष्टों से मुक्त करने

के लिए ही आप यहाँ आये हैं। आपका आशय, मानवों को नैतिक मार्ग पर चलाना तथा आध्यात्मिक सम्पदा से धर्मानुलम्बी भी होने के पाठ उन्हें सिखाना ही है। लोक रक्षणार्थ आप ने कई अवतार लिए। इस बार कलियुग में विश्व कल्याण की भावना से इस वेंकटाद्रि को कलियुग वैकुण्ठ बनाने का आपका उद्देश्य सराहनीय है। लेकिन यह प्रांत वराह क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। इस कारण आपको यहाँ पर रहने के लिए मुझे किंचित मूल्य पहले ही चुकाना पड़ेगा।'

'हे श्रीनिवास! कलियुग के मानवों की रक्षा के लिए आप यहाँ रहना चाहते हैं। आने वाले दिनों में सैकड़ों, हज़ारों, लाखों जनता आपके दर्शनार्थ यहाँ आएगी। वे सब आपको अपने भेंट चढ़ाएँगे। इसलिए आप मुझे एक वादा मात्र कीजिये कि उनमें से प्रथम भाग आप मुझे चुका देंगे।'

'बहुत अच्छा! एवमस्तु! और एक बात! मेरे दर्शनार्थ वेंकटाचल पर आये हुए भक्त, पहले यहाँ की पुष्करिणी में स्नान कर, वहाँ तीर पर स्थित आप के मंदिर में आप का ही दर्शन पहले करेंगे। आपको अपने भेंट चढ़ाकर ही, बाद में मेरे दर्शन के लिए आयेंगे। यही वेंकटाचल का नियम होगा। इस तरह करनेवालों के भेंटों को ही मैं सप्रेम स्वीकारूँगा।' श्रीनिवास की इन बातों से वराह स्वामी बहुत खुश हो गए। थोड़ी देर और बातचीत करने के बाद, अपने पास मंदिर की शुद्धि आदि काम करती रही वकुलम्मा को श्रीनिवास की सेवा करने नियुक्त करने की बात श्रीनिवास को बताकर वहाँ से वराह स्वामी चल पड़े।

वराह स्वामी ने अपने निवास पहुँचकर वकुलम्मा से कहा, 'माताजी! तुम्हारी इच्छा पूरी होने की घड़ी आ गयी है। उस कोने में

जो इमली का पेड़ है, उसके वल्मीक में आप का श्री कृष्ण वैकुण्ठ से यहाँ आकर श्रीनिवास के नाम से वास कर रहा है। अब सर पर चोट लगने के कारण किंचित दुखी है। इसी लिए आप वहाँ जाकर उसकी सेवा कीजिये और अपने पुत्र वात्सल्य का फिर से अनुभव किजिये।' वकुलम्मा को बहुत आनंद हुआ कि उनका प्रिय पुत्र श्री कृष्ण फिर से यहाँ आ गया है। अपनी इच्छा पूरी होने की घड़ियाँ आ गयी हैं। वराह स्वामी से आज्ञा लेकर वह श्रीनिवास के यहाँ चली गयी। उसे देखते ही श्रीनिवास भी उसे...'माँ' बुलाते हुए पास आ गए और उन्होंने प्रणाम भी किया। उनकी आँखों में से ख़ुशी के अश्रु बह रहे थे! वकुलम्मा ने भी ख़ुशी के मारे, आँसू बहाती हुई, वात्सल्य की भावना से श्रीनिवास को गले लगाया। कुछ देर तक बात न कर सकी। श्रीनिवास ने उनकी स्थिति देखकर, उन्हें होश में लाने के लिए कहा, 'देखो माँ! सर पर यह चोट देखो! बहुत दुःख रहा है।' तब वकुलम्मा इस दुनिया में आयी और 'बेटा! अभी आयी दवा लेकर!' कहती हुई जंगल में चली गयी। थोड़ी देर बाद कुछ पत्ते तथा जड़ी बूटियों को लायी और उनसे रस निकालकर, श्रीनिवास के सर पर श्वेतार्क के पत्तों और कपास से पट्टी बाँध दी। तब से हर दिन, इसी तरह श्रीनिवास के लिए खाना बनाती हुई, खिलाती हुई, घाव पर पट्टी बाँधती हुई, एक छोटे बच्चे की तरह विविध प्रकार से उनकी देखभाल करती हुई, उनकी सेवा में वकुलम्मा लग गयी। घाव के निदान के बाद श्रीनिवास हर दिन जंगल में जाकर, कंद मूल फल, धान्य, शहद इत्यादि लेकर उसे देता था और वकुलम्मा उसके लिए प्रीतिकर पकवानों को बनाकर वात्सल्य से खिलाती हुई आनंदित होती थी। श्रीनिवास भी उसे अपनी सगी माँ की ही तरह आदर सम्मान व प्यार देता था।

8. आकाश राजा और तोंडमान राजा

पुराने ज़माने में माधव नामक एक नित्याग्निहोत्र तथा पूजादि करनेवाले वैदिक ब्राह्मण ने नियति के कारण कामातुर होकर कुंडला नामक स्त्री से बलात्कार संभोग किया। उसी के साथ जंगलों में वास करता रहा। कुछ समय बाद आखिर उस स्त्री के मरणोपरांत, कुछ भक्तों के साथ, पुण्य क्षेत्रों की यात्रा करते-करते, कपिल तीर्थ आदि से होते हुए वेंकटाचल पर पहुँचा। वहाँ स्वामी पुष्करिणी में स्नान कर, वराह स्वामी के दर्शन से पाप से मुक्त हो गया। पूर्व जन्मों के पुण्य के कारण, वेंकटाद्रि पर ही वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। अगले जन्म में वेंकटाचल प्रांत का चोल राजा सुधर्म तथा उनकी पत्नी मनोरमा दम्पति का आकाश राजू नामक पुत्र बना। आकाश राजू के जन्म के बाद से राज्य में सही समय पर वर्षाएँ होने लगीं। अच्छी फसलें होने लगीं। देश में हरियाली छाने लगी। गो सम्पदा की वृद्धि होने लगी। इस कारण प्रजा बिना किसी समस्या के सुख शांति से जी रही थी।

एक दिन राजा सुधर्म, मृगया विनोद के लिए वेंकटाचल के घने जंगल में चला गया। साधु संतों को हानि पहुँचाने वाले सिंह, बाघ जैसे हिंसक जानवरों का वध करते-करते राजा, कपिल तीर्थ तक जा पहुँचा।

कपिल तीर्थ में उतरते समय, उसने एक सुन्दर नव युवती को उस तीर्थ में स्नान करते हुए देखा। देखते ही राजा को उस युवती से प्यार हो गया। उसके पास जाकर राजा ने अपनी इच्छा प्रकट की तो उस युवती ने कहा, 'मैं धनञ्जय नामक नाग राजा की इकलौती बेटी हूँ। मेरे पिता चाहते हैं कि मेरा विवाह एक सुविख्यात क्षत्रिय राजा के साथ करें।'

इन बातों को सुनकर राजा ने सहर्ष कहा। 'हाँ! मैं चंद्र वंश का क्षत्रिय राजा हूँ। यहाँ चोल देश पर मेरा राज है। क्षत्रियों के यहाँ गांधर्व विवाह सर्व सम्मत है।'

'हो सकता है। लेकिन मेरा एक विचार है। तुम्हारे कारण मेरे गर्भ से पैदा हुए बेटे को राज्याधिकार देना होगा।'

'यह कैसे हो सकता है? अभी मेरा एक पुत्र है। बड़े को छोड़कर छोटे बेटे को राज्य का अधिकार कैसे दूँगा?'

'तो राज्य को दो भागों में बांटकर दे दो।'

युवती की बातों को मानकर सुधर्म राजा ने अपने हाथ की अंगूठी उसे पहना कर, उससे गान्धर्व रीति में विवाह कर लिया। सुधर्म राजा खुशी से कुछ दिनों तक उस युवती के साथ वहाँ की कुंदरू की लता वाटिकाओं में विहार करता रहा। एक दिन नाग कन्या ने कहा कि मैं अब अपने नाग लोक में जाऊँगी। राजा ने अपनी सम्मति देते हुए कहा, 'तुम्हारे गर्भ से पैदा हुए पुत्र को पाल पोसकर बड़ा होने के बाद मेरे पास भेज दो। भेजते समय इस अंगूठी को हाथ में पहनाना मत भूलो। उससे मैं अपने बेटे को पहचानूँगा और आधा राज उसे दे दूँगा।'

नाग कन्या ने अपने पिता के पास पहुँचकर उन्हें सब कुछ बताया। चोल राजाओं के बारे में जानकारी पहले से होने के कारण, नाग राजा आनंदित हो गया। कुछ दिनों के बाद नाग कन्या गर्भवती हो गयी। नव मासों के बाद उसे एक पुत्र जन्मा। उसे सोलह साल तक बड़ा कर, सकल विद्याओं को नाग कन्या ने सिखाया। फिर पिता की आज्ञा लेकर, एक शुभ घड़ी में उससे कहा। 'हे पुत्र! क्षत्रियोचित

विद्याओं को सीखने के लिए अब तुम्हें अपने पिताजी के पास जाना होगा। भूलोक में वेंकटाचल नामक प्रांत के राजा सुधर्म, तुम्हारे पिता हैं। तुम इस रत्नों की अंगूठी को पहनो। वेंकटाचल पर कपिल तीर्थ के परिसर में जो कुंदरु की लताएँ हैं, उन्हें अपने कमर पर बांधकर राजा सुधर्म के पास जाओ और इस अंगूठी को जरूर दिखाओ।'

नागकन्या के पुत्र ने माँ के आदेशानुसार पाताल लोक पार कर, भूलोक में प्रवेश किया। कपिल तीर्थ के पवित्र दर्शन के बाद, वहाँ की कुंदरू लताओं को कमर में बाँध कर, नारायण पुरम पहुँचा। फिर राज भवन के पास खड़े होकर राजा के दर्शन की प्रतीक्षा कर रहा था। राजा को समाचार मिला और उसने बालक को अंदर बुलवाया। सुधर्म राजा को कुंदरू लता की कमर बंद के साथ उस बालक को देखते ही नाग कन्या का पूरा वृत्तांत याद आ गया। तुरंत अपनी अर्धांगिनी को सब कुछ बता दिया। फिर आकाश राजू तथा अन्य परिवार जनों को नाग कन्या व इस बालक के बारे में बता दिया। कुंदरी लता (तेलुगु में दोंडा पौधा) की याद में 'तोंडमान' नाम अपने इस द्वितीय पुत्र को रखा। नाग कन्या को दिए वचनानुसार, अपना राज्य नारायण पुरम को दो भागों में बांटा। नारायण पुरम को राजधानी के रूप में रखकर, राज्य के पश्चिम, उत्तर भागों का अधिकार आकाश राजू को सौपा तथा पूरब तथा पश्चिम भागों को तोंडमान को दे दिया। दोनों राज्यों में समान रूप में दास दासी जन, सैनिक बल आदि को भी बाँटा। सुवर्ण मुखी नदी के पश्चिम भाग में एक बड़ी दीवार को बनाया और इसे तोंडमनाडु का नाम रखा। इस तरह नाग कन्या को दिए हुए वचन को सुधर्म राजा ने निभाया। लेकिन दोनों बेटे अभी वयस्क न होने के कारण स्वयं सुधर्म ही राज कर रहा था। दोनों पुत्र आपस में अत्यंत प्रेम से रहने लगे।

आज भी तोंडमनाडु राज्य, सुवर्ण मुखी नदी के तट पर श्री कालहस्ती की नैऋति दिशा में ही है। अब वहाँ बहुत सारे छोटे-छोटे गाँव हैं। उस ज़माने के दीवार भी हैं। अब वहाँ गड्ढें और बुनियादें हैं। तोंडमान राजा से बनाया गया तालाब अभी भी 'तोंडमा चेरुवु' नाम से उपयोग में है। तोंडमान राजा से निर्मित श्री वेंकटेश्वर मंदिर अभी भी है। सुधर्म ने दोनों बेटों को समान रीति से राज्य को बाँटा लेकिन वे दोनों मिलकर ही राज्य का पालन किया करते थे। नारायण पुरम ही दोनों भागों की राजधानी मानी जाती थी। सुधर्म दोनों पुत्रों की मित्रता को देखते हुए बहुत ही प्रसन्न था। दोनों बेटों के विवाह भी रचने के बाद उन दोनों को राज्य के पालन सम्बन्धी सूत्रों को समझकर शान्त चित्त से वेंकटाचल गिरियों पर तपस्या करने चला गया और वहीं उसने मुक्ति भी पायी।

आकाश राजू की पत्नी धरणि देवी थी। दोनों पति पत्नी, सद्गुण युत थे। दैव भक्ति रखते थे। प्रजोपयोगी कार्यक्रमों में भी साथ रहते थे। उनके राज में प्रजा अत्यंत खुश थी। स्वार्थ से नहीं बल्कि सभी लोगों के कल्याण के लिए ही नायक तथा प्रजा भी तत्पर थे। आलसी न होते हुए, अतिथि अभ्यागतों के गौरव सत्कार करने में भी वे कुशल थे। अनेक कारवां, सराय और तालाब भी राजा ने बनाये।

इधर पांड्य राजा की पुत्री से तोंडमान का विवाह हुआ। तोंडमान ने अपने भाग के राज्य में खेतीबाड़ी के लिए बहुत बड़े तालाब को खुदवाया। उस तालाब में सवर्ण मुखरी नदी के जल को नहरों द्वारा लाया। तोंडमनाडु में अभी भी यह विशाल तालाब स्थित है।

इस तरह नारायण पुरम तथा तोंडम नाडु - दोनों राज्यों के राजा, प्रजा के कल्याण के लिए ही उनकी सम्मति से अनेक समाजोपयोगी कार्य करते हुए राज करते रहे और प्रजा भी सुख शांति से रहती थी।

9. आकाश राजू को पद्मावती पुत्रिका के रूप में मिलना तथा वसु नायक नामक पुत्र होना

आकाश राजू और धरणि देवी दोनों सुखी जीवन बिता ही रहे थे लेकिन संतान की प्राप्ति नहीं होने से दोनों दुखी थे। धरणि देवी अनेकों व्रत और पूजाएँ करने लगी। दान धर्म तथा संतान प्राप्ति के लिए नाग प्रतिष्ठाएँ भी उसने की। लेकिन सब निष्फल ही निकले। 'अपुत्रस्य गतिर्नास्ति' इस आर्योक्ति का स्मरण करते हुए आकाश राजू भी बहुत ही दुखी था। पुण्य तिथियों में वेद विदों को दानादि कर उनके आशीर्वाद पाया। ज्योतिषी पंडितों को बुलाकर जातक फल का जाँच करवाया। उन्होंने जातक चक्र की जाँच करके बताया कि जन्म तथा राशि फलों के अनुसार संतान तो अवश्य होगी। लेकिन निर्धारित समय बताना उन पंडितों के बस की बात न रही। सबके सब प्रयत्न विफल हो गए। संतान की इच्छा तो पूरी नहीं हो रही थी। इसी चिंता से राजा बहुत ही व्यग्र था।

एक दिन राजा ने तपस्वियों, वेद पंडितों और ज्योतिष पंडितों को बुलाकर उनसे प्रार्थना की कि संतान न पाने के कारण बताएँ। उन सबों ने भूत, वर्त्तमान तथा भविष्य काल की दृष्टि से राज दम्पति के जातकों की जाँच करके बताया, 'हे राजन! तीन तीन पत्नियाँ होने पर भी राजा दशरथ को संतान की प्राप्ति नहीं हुई थी। अपने कुल गुरु वशिष्ट जी की आज्ञा से उन्होंने वेंकटाचल की यात्रा की। पुत्र

कामेष्टि यज्ञ को रचा। बाद में ही चार पुत्रों को उन्होंने पाया। इस कारण आप भी वेंकटाचल का दिव्य दर्शन कर लीजिये। पुत्र संतान की प्राप्ति के लिए यज्ञ किजिए। निश्चित रूप से संतान को प्राप्त करोगे।'

इन बातों से राजा बहुत खुश हुआ। उन सब महानुभावों से प्रार्थना की कि सन्तानेच्छा से किये जाने वाले इस यज्ञ के यत्न को सफल बनायें। उन सबों ने मिलकर यज्ञ करने का निर्णय किया। इस बीच राजा ने भी वेंकटाचल की यात्रा पूरी की। तुरंत यज्ञ के कार्यक्रम के शुभारम्भ के लिए, राजा ने निर्धारित भूमि पर आगम पंडितों से निर्धारित सुमुहूरत में सोने के हल से जोतना शुरू किया। उस समय सारे महर्षि, वेद पंडित तथा याग पुरोहितादि सम्प्रदायानुसार यज्ञ से जुड़े हुए कार्यक्रमों का निर्वाह कर रहे थे। मुहूर्त के समय में आकाश राजू ने सकल देवताओं, अष्ट दिक् पालकों की पूजा कर, उनके अनुग्रह रूपी अक्षतों को सर पर भक्ति से धरा। तदनंतर राजा ने पण्डितों की अनुज्ञा से हल से जोतना प्रारम्भ किया। कुछ देर तक जोतने का कार्य ठीक ही चला। एक जगह पर हल रुक गया। कितना प्रयत्न करने पर भी जमीन में से हल आगे हिल ही नहीं रहा था। यह सब देखकर वहाँ के कर्मचारियों ने उस जमीं में कुदाली से खुदाई की तो जमीन से एक पेटिका निकली। जागरूकता से उसे बाहर लाया गया। राजा ने उसे खोला। उसमें कोमल कमलों के बीच एक सुन्दर बालिका सो रही थी जिसका मुँह चन्द्रमा समान था। उस बालिका शिशु को देखते ही वहाँ के सभी विद्वज्जन बहुत आनंदित हो गए। अनेक रीतियों में राजा को अपने आशीर्वाद देते हुए उन महानुभावों ने मुक्त कंठ से कहा, 'हे राजन! राजा जनक को भी लक्ष्मी देवी बेटी के रूप में सीता बन, यज्ञ भूमि में जोतते समय ही मिली थी। तेरे

भाग्य वश वही लक्ष्मी देवी, कमलों के बीच तुम्हें पुत्रिका के रूप में आज मिली है। इस बालिका का नाम पद्मावती रखा जाय।' आकाश राजू भी उनसे अनुमति लेकर, सानंद उस बालिका शिशु को गोद में ले, राज भवन में गया। धरणी देवी को भी पहले ही यह समाचार मिलने के कारण, उसने भी अत्यंत आनंदित हो, पति का आह्वान किया। आकाश राजू ने बिटिया को उसे देते हुए कहा, 'पद्मावती हमारी बिटिया के रूप में मिली है। इसकी अच्छी देख भाल करो।' धरणी देवी बहुत खुश थी। राज भवन में खुशियाँ छा गयीं। नगर में प्रजा भी खुशियाँ मनाने लगी।

क्रमशः नामकरण आदि उत्सव सम्पन्न हुए। पंडितों, पुरोहितों को राजा ने उचित रीति में पुरस्कृत किया। तोंडमान राजा भी खुश था कि अपने भैया को पुत्रिका मिली है।

महीनों के चलते-चलते पद्मावती बड़ी होने लगी। माता पिता को पहचानने लगी। चारों तरफ देखती हुई रेंगने लगी। अपने आप खड़ी होकर चलने का प्रयास करने लगी। तोते की तरह मीठी-मीठी बातें करने लगी। माता-पिता को यह बिटिया प्राण समान हो गयी। इस तरह दो साल गुजर गए।

इस बीच रानी धरणी देवी भी गर्भवती हो गयी। नौ मास पूरे होने के बाद मेष राशि में सूर्य तथा कर्काटक राशि में गुरु उच्च स्थिति में होने के शुभ समय में, रानी को राजोचित लक्षण युक्त पुत्र का जन्म हुआ। राजा की चिर कालेच्छा की पूर्ति हो गयी। वह आनंद सागर में डोल रहा था। उसने ज्योतिष पंडितों को बुलाया। जात, कर्म, नाम, करणोत्सव, डोलारोहण अदि सम्पन्न होते गए। क्रमशः अन्न प्राशन, कर्ण वेधा, केश खंडन, विद्याभ्यास आदि संस्कारों के बीच

राजा का पुत्र बड़ा होने लगा। वह बालक 'वसु नायक' नाम से सारी विद्याओं में कुशल होता गया और अपने माता-पिता को आनंदित करता रहा। इस तरह आकाश राजू को बिटिया और बेटा दोनों मिले।

राजा की पुत्री को देखनेवाले कहते थे कि वह साक्षात् लक्ष्मी देवी ही है। सम्पदा के साथ सौंदर्य, सद्गुण, शील आदि उस के विशेष गुण थे। पद्मावती तथा वसु नायक दोनों मिल जुलकर खेलते थे। उन दोनों की बाल्य क्रीड़ाएँ सब लोगों को आनंदित करती थीं। पद्मावती अपनी सखियों के साथ भी वनों में विहार करती थी। बालिका - सहज क्रीड़ाएँ खेलती थी।

वसुनायक भी अपने दोस्तों के साथ खेलते हुए, गुरुओं के पास श्रद्धा तथा विनय के साथ युद्ध विद्याएँ, अर्थ शास्त्र, धर्म शास्त्रादि विद्याओं को सीख रहा था। माता पिता के लिए पद्मावती तथा वसुनायक दोनों दो आँखों के सामान ही प्यारे थे।

10. श्रीनिवास का वन विहार

ऋतु राज वसंत तो प्रकृति की शोभा के लिए विख्यात है ही। झरनों में स्वच्छ शीतल जल बहते रहते हैं। लता वृक्षों पर वर्ण वर्णों के फूल खिलखिलाते रहते हैं। विविध फल भरित पेड़ तो राहों पर चलने वालों को आह्वानित करते रहते हैं। सूर्य तो वृक्षों तथा लताओं को आवश्यक सूर्य रश्मि का प्रसार करते हुए उनकी सुंदरता को देखकर, यहीं रुक जाने की इच्छा रखते हुए भी अनमना-सा पश्चिमाद्रि की तरफ चलता है।

वन्य मृगों के लिए भी यह अत्यंत प्रीतिदायक ऋतु है। हरियाली में ताजा घास पेट भर खाकर, इधर उधर छलाँग मारते हुए विहार

करते हुए, वे आनंद को लूटते रहते हैं। आम्र के पत्तों को खाकर, कोयल भी मीठी बोली बोलते रहते हैं। इस ऋतु की सुंदरता को देखकर, पेड़ पौधे तथा जंगल के जानवर अपने को खो देते हैं। तो फिर युवा मनों का क्या कहना? उम्र और परिसरों का प्रभाव उनमें उत्साह भर देता है जो अत्यंत सहज ही है।

आकाश राजू की पुत्री पद्मावती भी अपनी प्रिय सखियों के साथ बहुत ही आनंद से उप वनों में, अटवी प्रांतों में, खेलते कूदते विहार करने लगी। उन्हें देखकर लग रहा था कि बहुत दिनों से राज कुमारी वसंत ऋतु की प्रतीक्षा कर रही है।

उधर वेंकटाचल पर नित्य युवा वेंकटाचलपति ने सुप्रभात वेला में पुष्करिणी में नहाया। पीताम्बर पहन कर, माथे पर तिलक धारण कर वकुलम्मा से गूंधी गई वकुल माला को गले में पहन लिया। फिर वकुलम्मा के द्वारा परोसे रुचिकर भोजन का आस्वादन किया। तदनन्तर सुरभित ताम्बूल को मुँह में धरकर, धनुर्बाणों को हाथ में ले लिया। स्वर्ण पादुकाओं को पहनकर अपने अश्व का स्मरण किया तो वह अश्व तुरंत प्रत्यक्ष हो गया। वेंकटाचलपति माँ वकुलम्मा की अनुमति पाकर, अश्व पर सवार होकर वन विहार के लिए निकला।

क्रूर जानवरों को मारकर, साधु जंतुओं की रक्षा करते हुए आगे चलता गया। आखेट में थक जाने के कारण, वेंकटाचलपति ने कुछ देर के लिए विश्राम लेना चाहा। सामने एक आम का पेड़ देखा और घोड़े से उतरकर, रस्सी से उसे पेड़ को बांधकर, स्वयं पेड़ के नीचे लेट गया। शाम के समय, उन प्रांतों में टहलकर वहाँ के पेड़ों के फल तोड़कर वकुलम्मा के लिए ले जाना उसका नित्य कृत्य है।

11. उपवन में पद्मावती की हस्त मुद्राएँ देखकर नारद का भविष्य बताना

एक दिन पद्मावती अपनी सखियों के साथ उपवन में विहार करते समय, फूलों का चयन कर मालाएँ गूँथ रही थी। उसकी सखियाँ, फूलों तथा मेहंदी के वृक्ष के लिए ढूढ़ते फिर रही थीं। पद्मावती एक शिला वेदी पर बैठी थी।

ठीक उसी समय, नारद, उस कन्या के हृदय में प्रणय के बीज बोने के उद्देश्य से एक वृद्ध तापसी के वेष में उसके पास आये। उसे देखकर पद्मावती घबरा उठी। नारद ने कहा, 'देखो बिटिया! मैं वृद्ध तापसी हूँ। मुझसे डरो मत। तुम्हारी भलाई के लिए ही आया हूँ। तुम्हारे लिए अनुकूल पति के बारे में मालूम करने के लिए तुम्हारे हाथ की लकीरों को देखूँगा बस! तुम तो साधारण युवती नहीं हो। आकाश राजू के महान भाग्य से तुम उसे मिली हो! देवताओं के अंश से उतरी हो तुम यहाँ पर!! तुम्हारी सुंदरता से समानता रखनेवाला वर तुम्हें चाहिए न? लो, तुम्हारा वाम हस्त मुझे दिखाओ!' वृद्ध तापसी की बातों को सुनकर शर्माती हुई पद्मावती, शिला वेदी से नीचे उतरी और तापसी को उस पर बैठने की संज्ञा की। फिर मनोहर मुस्कराहट और किंचित भय के साथ, अपने वाम हस्त को उसने तापसी को दिखाया। उसकी हथेली की लकीरों को ध्यान से देखकर तापसी वेष धारी नारद ने कहा। 'अद्भुत! आप सच में जगन्माता लक्ष्मी हो! आपकी सुंदरता की समतुल्यता मात्र साक्षात् जगन्नाथ ही रख सकता है। इसमें संदेह ही नहीं है। पुराने ज़माने में रुक्मिणी देवी श्री कृष्ण के गुणों के बारे में सुनकर उसे ही अपना पति मान बैठी थी। आप भी उनकी तरह उस पुरुषोत्तम को ही पति के रूप में पाओगी। आप की मनोवांछा

अब फलने-फूलने लगेगी। भर्तृ कारक शुक्र गृह, अब सभी प्रकारों से अनुकूल हो, मीन राशि में बैठा हुआ है। स्वयं वर ही तुम्हें ढूढ़ते हुए तुम्हारे पास आएगा। नभो लोक के देवी देवता ही तुम्हारे विवाह के साक्षी होंगे।' तापसी की इन बातों को सुनती हुई पद्मावती ने लज्जा से सर झुका लिया लेकिन आनंद तो उसके मुख मंडल पर स्पष्ट दिखाई दे रहा था। अपने कार्य को सफल बनाकर नारद महर्षि वहाँ से चले गए।

12. उपवन में पद्मावती को श्रीनिवास का देखना

एक दिन श्रीनिवास वन में विहार करने निकला। धनुर्बाण ले लिया। सर पर रुमाल बांधा और सच ही में एक आखेटक की तरह तैयार होकर घोड़े पर बैठा और घर से निकला। उसे वैसे जाते हुए ख़ुशी-ख़शी देखती रह गयी वकुलम्मा, थोड़ी देर बाद कुटिया के अंदर चली गयी।

घोड़ा जल्दी-जल्दी जा रहा था, इतने में सामने दो बाघों को आपस में लड़ते हुए देख, रुक गया। श्रीनिवास ने एक ही बाण से उन दोनों बाघों को मारकर, घोड़े को धक्का देकर आगे चलने का इशारा किया। थोड़ी दूर जाने के बाद श्रीनिवास ने देखा कि कुछ हरिण अपनी संतान के साथ डर के मारे भागे जा रहे थे। उनके भय के कारण के लिए श्रीनिवास ने उस तरफ देखा तो उसे एक घमंडी हाथी अपनी तरफ आता हुआ दिखाई दिया। झट बाण निकालकर उस पर चलाने जा ही रहा था कि हाथी डर से पीछे मुड़कर भागने लगा। श्रीनिवास उसका पीछे करने लगा तो गजराज, सूँड को ऊपर उठाकर नमस्कार कर, एक उपवन में प्रवेश कर गायब हो गया। श्रीनिवास

अचरज में पड़कर उस उपवन में आप भी प्रवेश किया और हाथी के लिए ढूँढ़ने लगा।

यह आकाश राजू द्वारा निर्मित उपवन है। अब हर दिन पद्मावती इस में विहार के लिए सखियों संग आती है। आज वह अपनी सखियों को सुमन चयन के लिए भेज, आप एक वकुल वृक्ष के नीचे अकेली बैठी हुई है। श्रीनिवास हाथी के लिए ढूँढ़ते-ढूँढ़ते यहाँ तक आ गया। यहाँ पेड़ के नीचे अकेली अति सुन्दर युवती को देखकर उसकी संदरता से सम्मोहित हो, घोड़े से उतरकर उसके पास आने लगा। मन ही मन उसे लगा यही शायद लक्ष्मी देवी है।

किसी नए पुरुष को अपने पास आते हुए देखकर पद्मावती घबरा गयी। लेकिन राज वंश की युवती होने के कारण धीरज से उसने कहा, 'आप कौन हैं? इस तरह अकेली राज परिवार की युवती के पास आना आप के लिए उचित है क्या?'

श्रीनिवास ने झट से कहा, 'हे सुंदरी! मैं भी एक राज परिवार का युवक हूँ। मेरा नाम है श्री कृष्ण। देवकी और वासुदेव मेरे माता पिता हैं। मैं एक गजराज को ढूढ़ते हुए यहाँ आ गया हूँ। अब वह दिखाई नहीं दे रहा है। इस तरह मैं ने तुम्हें देखा। राज परिवार का होने के कारण तुम्हें देखते ही अनुराग हो गया है। गान्धर्व रीति से तुम्हें अपनाना चाहता हूँ।' नारद मुनि की बातों की याद हो आने से पद्मावती को भी लगा शायद यही वह वर है। लज्जा से वह कुछ बोलने में अशक्त रह गयी। सर झुकाकर खड़ी रही। श्रीनिवास को लगा कि युवती की सहमति भी मिल गयी है। मुस्कुराते हुए आगे पद्मावती की तरफ बढ़ ही रहा था कि इस बीच पद्मावती की सखियाँ दौड़ती आ गयीं। पद्मावती को उन्होंने रक्षा वलय की तरह घेर लिया। श्रीनिवास

पीछे हटा। पद्मावती भी आह भरकर पीछे हटी। सखियों ने श्रीनिवास से पूछताछ करना प्रारम्भ किया कि आप कौन हो, कहाँ से और किस लिए यहाँ आए हो? आप तो राज परिवार के ही लग रहे हो। लेकिन राज परिवार की युवती के समीप इस तरह आने का साहस कैसे किया? अगर इसकी खबर हमारे राजा तक पहुँचेगी तो आपको कड़ी सजा दी जाएगी। समझे? इसी लिए, बिना कुछ बोले, वापस मुड़कर चले जाओ।'

श्रीनिवास ने निडर होते हुए कहा, 'रूप, गुण तथा शील की दृष्टि से मेरे लिए परिणय योग्य युवती जानकर आया हूँ।'

सखियों ने कहा। 'अच्छा? बातें बना भी रहे हो! हमारे राजा आकाश राजू जी के बारे में जानते हो क्या?'

'हाँ, सब कुछ बहुत पहले से ही जानकर ही आया हूँ।'

'सब कुछ जानते हुए भी राज कुमारी के पास आने का तुम्हारा यह साहस?'

'भ्रमर का अपने योग्य पुष्प तक आना अपराध है क्या?

'क्यों नहीं? घोर अपराध है। शायद तुम ने समझ रखा है कि यह युवती किसी डाली या लता का सुमन है।'

'नहीं, मैं ने पहचाना कि यह राज भवन में प्यार से, काँटों के बीच पली जा रही कली है।'

'अच्छा, तो यह बात है। हे महोदय! ज्यादा बात मत करो! जिस रास्ते से आये हो, उसी से वापस जाना तुम्हारे लिए अच्छा है। वरना हमारे राजा से कड़ी सजा मिलेगी तुम्हें! अब रास्ता नापो झट से!'

'सो तो ठीक है, लेकिन पहले आप हम दोनों को अकेले छोड़कर कुछ समय के लिए चले जाओ!'

श्रीनिवास की निडर बातों को सुनते हुए एक सखी ने कहा, 'अरी विजया! तू अभी इस घोड़े पर बैठकर हमारे राजा के पास चली जा! इस महावीर के बारे में बता कर सैनिकों को ले आ!'

विजया भी घोड़े के पास चली गयी, लेकिन घोड़ा उसे चढ़ने न देते हुए छलाँग मारने लगा। कुछ सखियाँ घोड़े को काबू में लाने के प्रयास में उसे पत्थरों से मारने लगी। घोड़ा नीचे गिर पड़ा। सखी ने कहा, 'मैं दौड़ते ही चली जाऊँगी और राजा को साथ लाऊँगी।' पद्मावती ने उसे रोक दिया। यह सब तमाशा देखते हुए श्रीनिवास को खूब हँसी आ गयी। उसकी हँसी देखकर सखियाँ नाराज हो गयीं। वे आपस में कहने लगी कि 'इतना कुछ जानकर भी यह कैसे हँस रहा है देखो! यह बिलकुल पागल लग रहा है!'

श्रीनिवास ने भी कहा 'हाँ, मैं प्यार का दीवाना हूँ।'

सखियाँ पद्मावती को घेरकर, नगरी की तरफ चलने लगीं। पद्मावती भी वापस मुड़-मुड़कर श्रीनिवास की तरफ देखती हुई सखियों संग राज भवन की ओर चली गयी। श्रीनिवास बहुत देर तक उसकी तरफ देखता रह गया।

सूर्यास्त भी हो गया। चन्द्रमा अपनी सारी कलाओं को बिखेरते हुए आ गया। लग रहा था मानो अपने जीजा जी की हालत पर तरस खाते हुए हँस रहा है। श्रीनिवास भी चन्द्रमा के परिहास से लज्जित हो गया। घोड़े को उठाकर उस पर बैठकर वापस वेंकटाचल पर अपने घर जाने लगा।

13. श्रीनिवास के लिए वकुलम्मा व्याकुल और उसे चिंतित देख पूछताछ

वकुलम्मा व्याकुल होकर श्रीनिवास की राह देख रही थी। शाम तक जरूर घर पहुँच जाने वाला पुत्र आज देर रात तक क्यों नहीं वापस आया? पूर्णिमा की रात होने से चन्द्रमा की कांतियों से लग रहा था मानो सुबह ही है। आसपास सब कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा है। लेकिन श्रीनिवास तो अभी दिखाई नहीं दे रहा है। क्यों? वकुलम्मा बहुत ही चिंतित थी। रात के तीन पहर हो गए हैं। लेकिन अब तक उसका अता पता ही नहीं है। इतने में उसे घोड़े के चापों की आवाज सुनाई दी। कुछ देर बाद श्रीनिवास आ ही गया। लेकिन हर दिन की तरह साथ लाये फलों को वकुलम्मा के हाथों नहीं दिया। उससे बातें तक नहीं की। घोड़े को भेज दिया और आप जाकर लेट गया। वकुलम्मा बहुत घबरा गयी। बेटे के पास जाकर बैठ गयी और उससे बात करने की कोशिश की। लेकिन श्रीनिवास चुप रहा। वकुलम्मा ने गद्‌गद कंठ से कहा, 'बेटा! मेरा कुछ दोष हो तो बताना! मुझसे बात क्यों नहीं कर रहे हो? आखिर कौन सी मुसीबत आ पड़ी है कि तुम इस तरह चिंतित हो? संतान का दुःख, माता से सहा नहीं जाता है। किसने तुम्हें इतना दुखाया है मुझे अगर बताओगे तो मैं उसे ठीक करने का प्रयास करूँगी।' वकुलम्मा की इन बातों को सुनकर श्रीनिवास ने कहा, 'माँ! आज शाम, यहाँ के राजा, आकाश राजू की प्रिय पुत्री पद्मावती को मैंने देखा। उसने अपनी नज़रों से ही मुझे मोहित कर दिया। उससे हट ही नहीं रहा है मेरा मन!'

वकुलम्मा ने कहा, 'बेटा! हाथ नहीं लगने वाले फलों की आशा क्यों करते हो? वह तो राजा की पुत्री है। हम हैं अरण्य वासी। राजा मान लेगा क्या?'

'नहीं माँ! मुझे लगा कि वह भी मुझसे प्यार कर रही है। वह तो मेरे लिए ही जन्मी है। मेरे लिए ही बड़ी हो रही है। पुरोडाशा (हविस) का अधिकारी मैं ही हूँ न? अगर तुम सुनना चाहोगी तो उसकी कहानी मैं तुम्हें सुनाऊँगा।' इस तरह कहते हुए श्रीनिवास वकुलम्मा को पद्मावती का जन्म वृत्तांत सुनाने लगा।

14. पद्मावती का पूर्व जन्म वृत्तांत

पुराने जमाने में कुशध्वज नामक महर्षि हिमालय प्रांत में आश्रम बनाकर मेरे प्रति अत्यंत भक्ति से नित्य होमादि करते हुए निष्काम रीति से मेरी आराधना कर रहा था। एक दिन अग्नि की पूजा करने के बाद वेद मन्त्रों के साथ होम करने लगा। इतने में, होमाग्नि के पास रखे गए कुशों में से शिशु का रुदन सुनाई दिया। महर्षि, उस तरफ देखकर अचरज में पड़ गया और पहचाना कि वह रुदन एक बालिका शिशु का है। उसे महर्षि ने हाथों में ले लिया। वेद मन्त्र पढ़ते समय लभ्य शिशु को उसने वेदवती नाम रखा। वह बाला, बचपन से मेरे प्रति सर्व समर्पण भाव से अपने पिताजी की पूजा के लिए पूजा वेदी की शुद्धि करना, रंगोलियों से अलंकृत करना, कुशों, पष्पादिकों, फलों और पूजा वेदी की शुद्धि करना, रंगोलियों से अलंकृत करना, कुशों, पष्पादिकों, फलों और जल को लाना आदि काम बड़ी श्रद्धा के साथ करती थी। युवावस्था में प्रवेश करते ही उसने अपने पिता से कहा कि 'पिताजी! भगवान विष्णु को ही मैं पति मान चुकी हूँ। यही मेरी इच्छा है। आगे आपके आज्ञानुसार मैं चलूँगी।' अपनी पुत्री की इच्छा को जानकर महर्षि भी बहुत खुश हुआ और कहा 'बेटी! तेरी इच्छा बहुत ही श्रेष्ठ है। उन्नत आशय को रखना तो सराहनीय है ही। शीघ्र ही तेरी इच्छा सफल हो! इसके लिए तुझे भगवान विष्णु

के लिए तीव्र तप करना होगा। पार्वती देवी ने भी भगवान शिव को पति के रूप में पाने की इच्छा से पिताजी हिमवंत की अनुमति पाकर, हिमालय शिखरों पर तीव्र तपस्या कर, शिव जी की पत्नी बनी। इसलिए तुम भी हिमालय जाकर वहाँ किसी उचित स्थान पर तपस्या का श्रीकार करो। किसी दिन वे रमापति तुम्हें अवश्य अपनाएगा।' तब वेदवती अपने पिता जी के सूचनानुसार, हिमालय पर्वत पर एक झरने के पास आश्रम बनाकर, वहाँ तपस्या करने लगी।

कुछ दोनों बाद लंकेश रावण आकाश मार्ग में संचार करते हुए हिमालय शिखरों पर से गुजर रहा था कि वेदवती उसे दिखाई दी। विमान से नीचे उतरकर रावण उसके पास आया। तपोभंग होने से वेदवती ने आँखें खोली। रावण के भीकराकार को देखने के बाद भी वेदवती टस से मस न हुई। अपनी तपस्या आप करती रही। रावण ने कहा, 'सुंदरी! तुम्हारी तपस्या से मैं खुश हुआ। मुझे अनुग्रहीत करो।'

'तुम कौन हो? मेरे पास क्यों आये हो?'

'मैं लंकेश रावण हूँ। विकसित सुमन के पास आनेवाले भ्रमर की तरह तेरे पास आया हूँ। मधु को चखना बाकी है अब बस!'

'हे रावणासुर! काम मोहित होकर पता नहीं कुछ अनाप शनाप बोलते जा रहे हो! इन बातों को छोड़ो! और अपना रास्ता नापो!'

'तुम्हें साथ ले जाने आया हूँ। ऐसे थोड़े ही अकेले जाऊँगा!'

'रे मूर्ख! ऐसी बातें छोड़ो! दूर हटो!'

'मेरी बातें बेमतलबी नहीं हैं सुंदरी! प्यार भरी बातें हैं! आओ विमान पर चढ़ो!' कहते हुए उस पर लांघने जा रहा था कि वेदवती

उठ खड़ी हुई क्रोध भरी आँखों से उसे घूर-घूरकर देखने लगी। 'वाह! क्रोधारुण आँखों से तेरी सुंदरता बढ़ गयी है सच में!' कहते हुए रावण और पास आने का यत्न कर रहा था। लेकिन वेदवती ने निर्णय ले लिया कि ऐसे राक्षसों को कुछ अवसर देना ही नहीं चाहिए। उसी क्षण उसने कहा, 'अरे नीच रावण! स्त्रियों का इस तरह बलात्कार करना ही तेरे वंश विनाश का कारण होगा! याद रखो!' और सामने जल रही दावाग्नि में वह कूद पड़ी। रावण हताश हो, लौट गया।

अग्नि देवता ने, वेदवती की रक्षा कर, उसे अपनी पत्नी को सौंपा और कहा, इसे अपनी ही बेटी की तरह सम्भालो।'

मैं त्रेता युग में देवताओं की प्रार्थना की पूर्ति के लिए भूलोक में राक्षसों का वध करने अयोध्या के सूर्यवंशी राजा दशरथ का पुत्र बन जन्मा कैकेयी, सुमित्रा नामक दशरथ के अन्य पत्नियों को लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न नामक पुत्र हुए। जनक राजा की पुत्री वीर्य शुल्का सीता से मैंने विवाह किया, शिव जी के धनुष को तोड़कर! मेरे पिता के द्वारा अपनी पत्नी कैकेयी को दिए वचन के अनुसार, सीता और लक्ष्मण के साथ चौदह वर्षों के लिए मुझे वनवास जाना पड़ा। वनवास में दंडकारण्य में रहते समय, रावण की बहन, शूर्पनखा के बर्ताव के कारण लक्ष्मण ने उसके कान और नाक काट दिए थे। शूर्पणखा रावण के पास चली गयी और उसी ने सीता का हरण करने रावण को उकसाया भी! रावण का मामा मारीच पहले कभी मुझसे भिड़कर मार खाया था। उसी मारीच से रावण ने सहायता मांगी माया मृग बनने के लिए! मारीच हमारे आश्रम के पास स्वर्ण हरिण बनकर फिरने लगा और सीता ने उसे देखकर उसे पाने की इच्छा प्रकट की। मैं उस माया मृग के पीछे पड़ा। आखिर उसकी माया को जान लिया

और बाण से उसका वध कर दिया। माया मृग ने आखरी साँस लेते समय, 'हे लक्षमण! मुझे बचाओ!' कहकर आर्त नाद किया। उसे सुनकर सीता ने समझा कि मैं सचमुच ही मुश्किल में हूँ और लक्ष्मण को मेरे रक्षणार्थ वन में भेजा। ठीक उसी समय, रावण अतिथि के रूप में आश्रम पर पहुँचा। भिक्षा लायी हुई सीता को रावण ने वहाँ की भूमि के साथ उखाड़कर अपने रथ पर रखकर, अपनी नगरी ले जा रहा था। सीता की शोक भरी आवाज को सुनकर अग्निदेवता, वेदवती के साथ वहाँ पर आ गया। उसने रावण से कहा, 'हे रावण! मुझसे बात तक किये बिना ही भागे जा रहे हो! हाँ, सच ही में कामातुर व्यक्ति किसी की बात नहीं सुनता है। आँखें मूँद लेता है। ऊँच नीच के भेद को भी वह भूल जाता है।'

'अरे अग्नि देवता? यह तुम कैसी बातें कर रहे हो?'

'क्या कहा? अरे, तुम जिस स्त्री को लेकर जा रहे हो, वह माया सीता है। तुम जब मारीच से बात कर रहे थे, उन बातों को राम ने अपनी शब्द वेदी विद्या के सहारे सुन लिया। असली सीता को मेरे पास रक्षा के लिए रख दिया और माया सीता को आश्रम में रखा। यह तुम जान लो कि यह जो तेरे रथ पर है, वह माया सीता ही है।'

'अच्छा, तो यह बात है? हे अग्नि देवता!! सही समय पर आए हो! असली सीता को मेरे रथ पर बिठाकर, माया सीता को सत्वर ले जाओ! राम के यहाँ आने के पहले मुझे लंका पहुँचना है।' कहकर रावण माया सीता के साथ लंका चला गया।

वेदवती लंका में रही। हनुमान के द्वारा इस समाचार को जानकर मैं सेतु बनाकर, लंका पहुँचा वानर सेना के साथ! विभीषण की सहायता से रावण तथा कुम्भकर्ण का वध किया। लेकिन लोकों को

सीता के पातिव्रत्य को दिखाने के लिए, माया सीता अग्नि में प्रवेश कर गयी। अग्नि देवता बेटी समान वेदवती को आप रख लिया और असली सीता को साथ ले आया। कुशध्वज की कहानी मुझे सुनाया। वेदवती के संकल्प के बारे में भी बताया और कहा 'कृपया आप दोनों को स्वीकारो!' रामावतार में मेरा एकपत्नीव्रत था। अग्नि देवता की इच्छा को तथा वेदवती की चिर वांछा को पूरा करने के लिए मैं ने अग्निदेवता से कहा, 'हे अग्नि देवता! आगामी कलियुग में भूलोक में लोग पाप कार्यों में ही अधिक रूचि रखते हैं। उनकी रक्षा करने, मैं कलियुग में वेंकटाचल पर वेंकटेश्वर बनकर, अवतरित होऊँगा! इसी प्रांत के वेकटाचल प्रांत के नारायण पुरम के राजा आकाश राजू को वेदवती, जनक को सीता की तरह पद्मावती के रूप में भूमि में से उपलब्ध होगी। उससे मैं विवाह करूँगा। तब तक वेदवती को तुम्हारे ही पास रखो!' उसी वचनानुसार वेदवती, आकाश राजू के घर में, पद्मावती के रूप में मेरी प्रतीक्षा कर रही है। अब माँ! आप मेरे और पद्मावती के विवाह के लिए यत्न करो।'

पद्मावती के जन्म वृत्तांत को सुनकर वकुलम्मा ने सोचा, 'दैव विधि अपने आप चालू रहती है। बाकी सब इसके उपकरण मात्र हैं। दैव निर्णय को बदलने की शक्ति किसी में भी आखिर ब्रह्मा में भी नहीं होती है। जब जब जो कुछ होना है, सो होगा ही। लेकिन मानव को तो अपना प्रयत्न आप करना ही पड़ेगा। फल तो परमात्मा के निर्णयानुसार होगा। अब मैं अपनी तरफ से यह कार्य सफल होने के लिए कोशिश करूँगी।' श्रीनिवास को देखते हुए उसने कहा। 'प्रिय वत्स! तुम्हें गृहस्थी बनाने के लिए अपना यत्न मैं अवश्य करूँगी। आशा करूँगी, मेरा मार्ग सुगम तथा शुभ प्रद होगा।' इस तरह

वकुलम्मा ने अपनी बातों से श्रीनिवास को बिलकुल एक साधारण मानव की तरह संतुष्ट किया और श्रीनिवास ने भी आनंदित होते हुए वकुलम्मा को संतुष्ट किया।

15. पद्मावती की सखियों द्वारा वकुलम्मा धरणी देवी से मिलना

उद्यान से लौटने के बाद पद्मावती कुछ अलग से व्यवहार करने लगी। हमेशा कहीं खोयी-सी रहती थी। खाना ठीक से खाती नहीं थी, मन में कुछ सोचती ही रहती थी और ठीक से सोती भी न थी। पल में सोना, पल में जागना! पल में आनंद, पल में चिंता! धरणी देवी ने पुत्री की स्थिति को देखकर पति को बताया। राजा भी पुत्री की इस स्थिति को देखकर घबरा गया और देव गुरु बृहस्पति को बुलाकर पुत्री के बारे में पूछा। तब बृहस्पति ने कुछ देर सोचकर कहा, 'हे राजा! आपकी पुत्री ने पुष्पोद्यान में किसी अन्य पुरुष को देखा और उसके बाद इस प्रकार के मनोविकार उसमें पैदा हुए हैं। लेकिन कोई चिंता नहीं। स्वर्ण मुखी नदी के तीर पर जो अगस्त्य मुनि का आश्रम है, वहाँ आप के पुरोहितों को भेजिए और उनके नेतृत्व में शिव जी के सहस्र घटाभिषेक का आयोजन कीजिये। आप सबका कल्याण होगा!' और इतना कहकर देव गुरु बृहस्पति चले गए। और इस समाचार को परिवार और देश की जनता को बताकर, राजा ने अपने पुरोहितों को देव पुरोहित की बातों के अनुसार सहस्र घटाभिषेक करने अगस्त्याश्रम भेजा! सखियों सहित अपनी प्रिय पुत्री को भी उनके साथ भेजा।

कड़ी निगरानी के कारण, उद्यान में किसी अनजान पुरुष से मिलने के विषय को भी वे सब भूल चुके थे।

राजा की सहायता के लिए अगस्त्य महर्षि अपने द्वारा स्थापित शिव जी के सहस्र घटाभिषेक करने लगे जिसमें अनेक वेद पंडित, आगम शास्त्र के ज्ञानी श्रद्धा से भाग ले रहे थे। आश्रम में उन सब पंडितों के रहने की व्यवस्था आश्रम वासी बड़ी ही श्रद्धा से कर रहे थे। परमेश्वर की कृपा के लिए घटाभिषेक वैभव से हो रहा था और सखियों सहित पद्मावती वहाँ के उद्यान में विहार कर रही थी।

श्रीनिवास की इच्छा की पूर्ति के लिए वकुलम्मा भी अगस्त्याश्रम की तरफ चल पड़ी। सखियों सहित विचरती पद्मावती के पास पहुँची और उनके बारे में उसने पूछा। तो सखियों ने सारा वृत्तांत उसे बताया। धरणी देवी से मिलने की अपनी वांछा को वकुलम्मा ने प्रकट किया। घटाभिषेक के बाद उसे भी अपने साथ राज भवन ले जाने के लिए सखियों ने स्वीकारा।

16. भविष्य वाणी बताने वाली स्त्री के वेश में धरणी देवी से वेंकटेश्वर का मिलना और भविष्य बताना

वकुलम्मा के नारायण वन पहुँचने के पहले ही नारायण ने इस कार्य को संपन्न करना चाहा और भविष्य वाणी बताने वाली जनजातीय स्त्री के रूप में राज भवन पहुँचा। मुँह पर हल्दी, माथे पर कुंकुम की बड़ी सी बिन्दी, पीली साडी, हाथों में रंगीन चूड़ियाँ, बालों में फूल, छोटे से बच्चे को पीठ पर बांधकर भविष्य बताने वाली आदिवासी स्त्री की तरह वेंकटेश्वर, नारायण पुरम की गलियों में फिरने लगे। हाथों में हल्दी कुंकुम लदी टोकरी, उसमें धान, भविष्य बताने के समय इस्तेमाल करनेवाली छोटे-छोटे शंख लदी गयी लकड़ियाँ, पान खाती हुई, भविष्य वाणी बताने का बार-बार विज्ञापन!

उस महिला को देखते ही राज भवन की परिचारिकाओं को लगा कि इस स्त्री को अपनी महारानी धरणी देवी के पास अवश्य ले जाना चाहिए। धरणी देवी के पास जाकर उन्होंने इस स्त्री के बारे में बताया तो धरणी देवी ने भी उत्साह से उसे बुलाने को कहा। स्त्री के वेष में वेंकटेश्वर ही हैं न? उन्होंने झट से कहा कि 'ना बाबा! मैं राज भवन में नहीं आऊँगी। मेरी वेश भूषा का मज़ाक उड़ाएँगे आप लोग! इतना ही नहीं शायद आप मेरी बच्ची के साथ इस नगर से मुझे भगाने का नाटक रच रही हो। बिलकुल राज भवन में नहीं आऊँगी।' सखियों ने जाकर धरणी देवी को बताया कि 'भविष्य बतानेवाली महिला राज भवन में आने के लिए डर रही है।' तो स्वयं धरणी देवी ने राज भवन के प्रवेश द्वार तक आकर उस स्त्री को बेझिझक अंदर आने की प्रार्थना की। उस स्त्री को सच बताने पर बहुत सारे उपहार भी देने का लालच भी रानी ने दिखाया। अपने साथ अंदर ले जाकर एक उन्नतासन पर उसे बिठाया। फिर धरणी देवी से उन्होंने कहा, 'हे रानी! आप अच्छी तरह नहा धोकर रेशमी साड़ी पहनकर अपने परिवार के देवता की प्रार्थना कर आओ मेरे पास! तब जाकर आपके मन की बात को मैं साफ़-साफ़ बताऊँगी।' धरणी देवी ने उसकी बात मान ली। स्नान कर, कुल देवता की प्रार्थना कर उसके सामने आकर बैठ गयी। भविष्य बतानेवाली स्त्री ने कहा, 'तो फिर मेरे कुल के देवता को पहले भेंट चढ़ाओ न?' धरणी देवी ने आज्ञा दी तो सखियों ने सोने की सूप में मोती, हल्दी, कुंकुम, चन्दन, फूल तथा फल रखकर उसके सामने रखा। लेकिन भविष्य बतानेवाली स्त्री ने कहा, 'इस में दक्षिणा नहीं है।' तो धरणी देवी ने हथेलीयों भर सोने के सिक्के लाकर उस सूप में भर दिए। तब फिर से उस स्त्री ने कहा,' 'देखो रानी!! मेरा बच्चा भूखा है। उसे खाना खिला दो न?' तो रानी

ने खाना भी मंगवाया। सोने की टोकरी में क्षीरान्न लाया गया। लेकिन उसका बच्चा हठ करने लगा। डांट डपटने पर भी बच्चा खा नहीं रहा था तो स्त्री ने उसे दो चांटे लगाए और स्वयं उस क्षीरान्न को खिलाया। हाथ मुँह धोने के बाद, पान खाती हुई, नखरे दिखाती हुई उस स्त्री ने महारानी से कहा, 'अरी ओ माई! मैं भविष्य बहुत अच्छी तरह बताती हूँ। तेरे मन की बात भी सच-सच बताऊँगी। नर नारायण जी मेरा शौहर है। यह लड़का जिसके बारे में तुम लोग जानना चाहती हो, वह उसी का बेटा है। उसके कहने पर ही मैं यहाँ आई हूँ। तुम लोगों ने मेरा दिल खुश कर दिया। मैं झूठ बोलती नहीं कभी, मेरी वाणी कभी गलत नहीं होती है समझो! आप के मन की चिंता को दूर कर, खुश करनेवाली बात मैं बताती हूँ। सुनो।' उसकी इन बातों से धरणी देवी बेहद खुश हो गयी। वह स्त्री, रानी को पूरब की तरफ मुँह करती बिठाकर स्वयं उत्तराभिमुख बैठ गयी। अपने बेटे को गोद में लेकर भविष्य वाणी सुनाने तैयार हो गयी। पहले महारानी से दी गयी भेंट को उसने अपनी टोकरी पर रखा। टोकरी में से कुछ बांस की छोटी-सी लकड़ियाँ निकालकर टोकरी पर उसने रखा। भविष्य वाणी बताते समय हाथ में लेनेवाली शंख लदी हुई दो लकड़ियों को लेकर उन पर हल्दी कुंकुम उसने चढ़ाया और टोकरी पर पहले से रखी हुई भेंट पर रखा। इस तरह अपनी टोकरी, भविष्य वाणी बताने के सारे उपकरणों के पवित्रीकरण के बाद उसने अपनी वाणी शुरु की।

स्त्रीः 'हे मधुर मीनाक्षी! कञ्ची कामाक्षी! काशी विशालाक्षी! तीन करोड़ देवी देवताओं! पहले गणपति देव को नमन करूँगी, सारे विघ्नों को दूर करने और मेरी वाणी को सच ठहराने के लिए!! हे देवी देवताओं! इस महारानी के मन की बात को आप मुझे सुनाएँ! हे कालहस्ती ज्ञान प्रसूनांबा माई! हे कनक दुर्गम्मा माई! आप सच-सच

बताएँ मेरी वाणी के द्वारा! एक शब्द भी अपशब्द न हो मेरी वाणी में! (नमस्कार करने के बाद) ओ रानी! तुम्हारे मन में अब एक चिंता बैठ गयी है न? दिन रात सोच रही हो कि अब क्या होगा? कहाँ तक ले जाएगा यह? लेकिन तेरी बेटी तो बिलकुल चंगी है। फ़िक्र करने की जरुरत ही नहीं। यह कोई रोग नहीं, भूत प्रेत का चक्कर या भय नहीं, तेरी बेटी तो सोना है सोना! उसने बगीचे में एक नौजवान को देखा, उस से प्यार हो गया है तेरी बेटी को, बस इतना ही हुआ है!'

रानी : कौन है वह नौजवान?

स्त्री : वह तो सारी दुनिया का राजा बनेगा। तेरी बेटी के लिए ही यहाँ आया है।

रानी : कहाँ रहता है? स्वाभाव कैसा है उसका?

स्त्री : एक जगह नहीं, हर जगह पर रहता है वह! अब तो यहीं है वह सामने! तीनों गुणों में उत्तम गुण, सत्व गुण है उसका!

रानी : सामने माने क्या और कहाँ?

स्त्री : यहाँ, वहाँ, हर कहीं पर! तेरी बेटी के लिए अब वह उत्तर दिशा में उस पहाड़ पर है।

रानी : तेरी बातों पर विश्वास कैसे करें?

स्त्री : तेरी बेटी की सहेलियों से पूछो न कि बगीचे में क्या हुआ उस दिन? हाँ, कल या परसों एक वृद्ध महिला आएगी तेरे पास बेटी का हाथ मांगने के लिए!

रानी : उसका जात पात मालूम नहीं, कहाँ का है, कहाँ से आया है कुछ नहीं पता हमें! कैसे देंगे हमारी प्यारी बिटिया को उसे?

स्त्री : मेरी बात मानो, उसकी पत्नी बनने के लिए ही जन्मी है तेरी बेटी! खुद वह ब्रह्म देवता भी इस ब्याह को रोक नहीं सकता है समझी? तीनों लोकों के स्वामी वह कन्हैया ही तेरा दामाद बनेगा जरूर!

रानी : अगर हम नहीं मानेंगें तो?

स्त्री : हे राम, ऐसी बातें मत करो माई! तेरी बेटी उसी के लिए जन्मी है। अगर ऐसा न हुआ तो तेरी बेटी तुझ से दूर हो जाएगी!

रानी : (नाराज होकर) ये क्या अनाप शनाप बातें कर रही है तू?

स्त्री : अनाप शनाप नहीं, सच है सच! अपनी बेटी से ही पूछ लो न? सच जान लो! मेरी बात कभी झूठी नहीं हुई मानो! अपने पति को मना लो बेटी की ब्याह रचाने! धूम धाम से ब्याह हो जाएगा। तेरी बेटी लक्ष्मी की बहन बन जाएगी। आनेवाली निधि को मत ठुकराना! कह दो कि उस तिलकधारी पुरुष को ही अपनी बेटी को दोगी! मन्नत माँगो, तुम्हारी बेटी सही सलामत रहेगी!

रानी : ठीक है, बेटी का हाथ मांगने जब वह बूढी आएगी, तब सोचेंगे!

स्त्री : सोचना नहीं, वादा करो न?

रानी : अगर बूढ़ी की बात सच निकलेगी तो जरूर वह तिलकधारी ही मेरा दामाद बनेगा!!

स्त्री : आप लोगों का कल्याण हो!! मेरी बात सही निकलेगी ही! मधुर मीनाक्षी, काशी विशालाक्षी, साथ देंगी इस ब्याह में!! ठीक है माई, अब तो मैं चलूँगी!!

धरणी देवी भी उससे विदा लेकर राज भवन में चली गयी और भविष्य बताने आयी जनजातीय स्त्री भी चली गयी।

17. वकुलम्मा का धरणी देवी से मिलना

महारानी पद्मावती के कमरे में पहुँच गयी जहाँ वह नीरस और उदासीन लेटी थी। सखियाँ उसका उपचार कर रही थीं। रानी ने पद्मावती के पास बैठ कर पूछा, 'बेटी! उद्यान में क्या तुमने किसी पराये पुरुष को देखा?' तब जाकर पद्मावती की सखियों को सब कुछ याद आया और उन्होंने उस दिन के पूरे समाचार को रानी को सुनाया। रानी ने देखा कि पद्मावती भी मुस्कान से चुपचाप यह सब सुन रही है। रानी को भविष्य वाणी बतानेवाली स्त्री की बातें स्मरण में आयीं और उसने झट तिलकधारी नारायण देवता की प्रार्थना कर मन्नत माँगी। तत्क्षण पद्मावती की उदासीनता गायब हो गयी और वह पूर्वतया स्वस्थ हो गयी। रानी के आनंद की सीमा न रही। इतने में रानी को समाचार मिला कि पूजा के लिए अगस्त्याश्रम गयी हुई सखियों के साथ वकुलम्मा रानी से मिलने के लिए आयी है। उसने वकुलम्मा को बुला लाने की आज्ञा दी और खुद अपने भवन में उस बूढ़ी स्त्री की प्रतीक्षा में बैठ गयी।

सखियाँ वकुलम्मा को रानी के सामने लायीं। रानी मन में सोचने लगी कि उस जनजाति स्त्री की बातें सच निकल रही हैं। उसने वकुलम्मा को उचित आसन पर बिठाकर कुशल मंगल पूछने के बाद उसके यहाँ तक आने का कारण पूछा। वकुलम्मा ने बताया कि 'वेंकटेश के लिए आपकी पुत्री का हाथ माँगने आयी हूँ।' रानी मन ही मन खुश थी लेकिन प्रशांत चित्त से उसने वकुलम्मा से पूछा, 'बिना जात पात पूछे, बेटी को किसी युवक के हाथ कैसे सौंपें?'

वकुलम्मा ने जवाब में कहा, 'महारानी! वेंकटेश के माता पिता, देवकी वसुदेव हैं। वे चंद्र वंश के राजा हैं, वशिष्ठ गोत्र है, जन्म नक्षत्र श्रवण है। अभी वह नौजवान है। पूर्व नाम श्रीकृष्ण और अब वेंकटाचलपति के नाम से व्यवहृत है। वह सद्गुणों की खान है। उसके पास ढेर सारी संपदा भी है। लोग कहते हैं कि सम्पदा तो अस्थिर है, लेकिन उसकी सम्पदा तो हृदयास्थ है। उससे बढ़कर गुणवान, बुद्धिमान, भाग्यवान तथा सुन्दर और कोई इस दुनिया में नहीं मिलेगा आपको! इसमें कल्पना कुछ भी नहीं हैं। यह कहने में कोई संदेह नहीं कि आपके लिए वेंकटेश बिलकुल लायक दामाद है। इस बीच उपवन में उसने आपकी बेटी को देखा और तब से उसके प्यार में खोया हुआ है। मैं ने उसकी अवस्था को देखकर पूछा तो यह सब कुछ उसी ने बताया। इसी कारण मैं आपके यहाँ आयी हूँ। वेंकटेश मुझे अपनी माँ मानता है। अब आप बिना किसी शंका के उसे अपनी कन्या को दे दीजिये, इस शादी से आप दम्पति भी तीनों लोकों में पूजित होंगे।' उसकी बातों से खुश होकर रानी ने अपने पुत्र वसु नायक को बुलाया और राजा आकाश राजू को बुला लाने को कहा। आकाश राजू के आने पर उसे दूसरे कमरे में ले जाकर रानी ने कहा, 'देखिये, सुबह मैंने भविष्यवाणी बतानेवाली स्त्री से सुना कि एक बूढ़ी स्त्री आपसे मिलनेवाली हैं। आपकी बेटी के विवाह के सम्बन्ध में बात करने! उसकी सारी बातें सच निकल रही हैं। उसके कहे अनुसार भगवान से मैंने मन्नत माँगी और हमारी बेटी स्वस्थ हो गयी। उस स्त्री ने बताया था कि उपवन में आपकी बेटी ने किसी अन्य पुरुष को देखा और उससे प्यार करने लगी। आपको बताने के लिए आपकी बेटी डर रही है और उसकी अस्वस्थता का कारण यही है। मैंने उसकी सखियों से बातचीत की तो यह सब मालूम हुआ। पद्मावती ने भी चुपचाप

स्वीकृत किया कि यह सब सच है। अब वकुलम्मा ने बताया कि उसका तिलक धारी पुरुष का चंद्र वंश है। वशिष्ठ गोत्र है। उसने यह भी बताया कि उससे बढ़कर गुणवान और भाग्यवान आपको कोई और योग्य वर नहीं मिलेगा। और एक बात यह है कि उस जनजाति स्त्री ने बताया कि अगर आप इस तिलकधारी युवक से आपकी बेटी की शादी नहीं रचेंगें तो आपकी बेटी भी आपसे दूर हो जाएगी। मुझे तो लग रहा है कि यह सब देव निर्णीत है। मैंने मन्नत माँगी और इधर बेटी को स्वस्थता मिली। आईये, आप खुद देख लीजिये।' पिताजी को देखकर पद्मावती पूर्ववत मुस्कुराती हुई उससे मिली। आकाश राजू को भी लगा कि यह सब देव निर्णीत ही है। अपनी बेटी को प्यार से देखते हुए राजा ने कहा, 'बिटिया! तुम्हारे मन को हरनेवाला वह दूल्हा कौन है?' पिताजी की बातों को सुनकर पद्मावती ने लज्जित होकर सर झुका लिया। प्यारी बिटिया को देखते हुए राजा ने कहा, 'भगवान ने हमें कष्ट न देते हुए हमारी बिटिया के लिए दूल्हे को स्वयं ढूँढ़ कर दे दिया! हम धन्य हैं। बेटी! तुम सदा खुश रहो! उसी वर से तुम्हारी शादी रचेंगे, जिसने तुम्हारे मन को जीत लिया है।' इस तरह कहकर आकाश राजा अपने बेटे वसु नायक को साथ लेकर राज सभा में गया और वहाँ अपने मंत्री, पुरोहितों, प्रजा और बंधु मित्रों को बुलाकर बिटिया के विवाह के बारे में बताया। उन सबों ने आनंद से स्वीकृति दे दी।

18. शुक महर्षि तथा बृहस्पति को आह्वानित कर पद्मावती के विवाह के लिए मुहूर्त तय करना

आकाश राजू ने अपने पुत्र वसु नायक को देव गुरु बृहस्पति जी को और अपने भाई तोंडमान को शुक महर्षि को आह्वानित कर लाने

भेजा। बृहस्पति वसुनायक से समाचार पाकर दिव्य दृष्टि से शुभ समय जानकर उसके साथ चल पड़ा।

इन दिनों शुक महर्षि सुवर्ण मुखरी नदी के तीर पर दक्षिण कैलाश पर्वत की पश्चिम दिशा में शुक तीर्थ नामक आश्रम में वास कर रहे हैं। तोंडमान के द्वारा समाचार जानकर उन्होंने भी अपनी दिव्य दृष्टि से जाना कि लोक कल्याण की वेला आ गयी है और रथ पर आसीन होकर तोंडमान के साथ आकाश राजू के यहाँ पहुँच गए।

(यह श्री शुक तीर्थ बहुत ही विख्यात क्षेत्र है। अब यह उस प्रांत के किसी किसान का खेतीबाड़ी का क्षेत्र हो गया है जो शिव जी के मंदिर की दक्षिण दिशा में एक किलोमीटर की दूरी पर पर्वतीय प्रांत के मार्ग में आम के पेड़ों के बीच कुँए के रूप में है। श्री कालहस्ती के दिव्य क्षेत्रों में यह श्री शुक तीर्थ आज भी दर्शनीय है।)

पहले बृहस्पति नारायण पुरम पहुँच गए। आकाश राजू ने देव गुरु का सादर आह्वान कर अपने भवन में ले गया। उन्नत आसन पर उन्हें बिठाया और पद्मावती के विवाह का सारा वृत्तांत उन्हें उसने सुनाया। वकुलम्मा ने आकर विवाह के प्रस्ताव को रखने की बात भी कही। सब कुछ सुनने के बाद बृहस्पति ने कहा, 'हे राजा! ये वेंकटनाथ ही वैकुण्ठ के महाविष्णु हैं। शायद शुक महर्षि इस भूलोक के वेंकटाचलपति के बारे में अधिक जानकारी रखते होंगे। उनसे ही जानना होगा हमें।' इतने में शुक महर्षि भी वहाँ पहुँच गए। आकाश राजू ने उन्हें भी बड़े ही आदर सम्मान से आह्वानित कर उन्नत आसन पर बिठाया और पद्मावती विवाह से सम्बन्धित सारा वृत्तांत उन्हें भी सुनाया। सारा वृत्तांत सुनकर शुक जी ने कहा, 'हे राजा! यह दैविक घटना है जिसके कारण भगवान विष्णु आपका दामाद होने वाला है

और उन्हें आप कन्यादान करने का दिव्य फल प्राप्त करने जा रहे हो। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। बिना किसी शक के विवाह की तैयारियाँ करना होगा तुम लोगों को! शुभस्य शीघ्रं! आशा है देव गुरु बृहस्पति की स्वीकृति भी मिल जायेगी।' इन बातों को सुनकर बृहस्पति ने भी हाँ में हाँ मिला दी। और आगे के कार्य के बारे में आकाश राजू से उन दोनों ने पूछा। तब आकाश राजू ने कहा, 'आप जैसे महानुभावों की सम्मति मिलने के बाद भी मैं भला कैसे टोक सकता हूँ? वर और वधू की जन्म कुंडलियों के आधार पर कृपया आप ही शुभ मुहूर्त का निर्णय कीजिये!' राजा की बातों से आनंदित होकर बृहस्पति ने वर और वधु की जन्म कुंडलियों को परखकर उन दोनों के वंश, गोत्र, जन्म नक्षत्रों के अनुसार विवाह के लिए विंशति वर्गों का निरीक्षण किया। तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण की दृष्टि से तारा बल तथा चंद्र बल युत निष्पंचन पुष्करांश सहित सारे ग्रहों के शुभ स्थानों पर होने के मुहूर्त का निर्णय किया। उसके अनुसार आकाश राजू ने उचित रीति में एक लेख लिखा। पद्मावती वेंकटेश्वर के कल्याण पत्रिका के साथ उस लेख को भी शुक महिर्ष ने वेंकटाचल को भेजा। राजा ने सानंद होकर बृहस्पति से प्रार्थना की कि विवाह का कार्य संपन्न होने तक भी कृपया साथ रहें। बृहस्पति अपनी सम्मति देकर देव लोक चले गए। पद्मावती और श्री वेंकटेश्वर के विवाह के लिए आकाश राजू की सम्मति को सुनकर, वकुलम्मा ने सानंद धरणी देवी से विदा लेकर अपनी राह के लिए आश्रम पर देख रहे श्री वेंकटेश्वर के पास पहुँच गई और खुश खबरी भी उसने सुना दी। और 'शीघ्रमेव कल्याण प्राप्तिरस्तु' कहती हुई आशीष भी उसने दे दी। श्रीनिवास ने भी मंद मंद मुस्कान से अपनी ख़ुशी व्यक्त की। वकुलम्मा आनंद सागर में डूब गयी क्योंकि अपने मन की बात सफल हो गयी है।

19. शुक महर्षि का वेंकटाचल पहुँचकर, वेंकटाचलपति को आकाश राजू का सन्देश और पद्मावती से उसके विवाह का आह्वान पत्रिका देना

आकाश राजू का सन्देश और पद्मावती से वेंकटाचलपति के विवाह की आह्वान पत्रिका को लेकर शुक महर्षि ने शेषाचल आदि पर्बतों को पारकर स्वामी पुष्करिणी के तट पर इमली के पेड़ के नीचे बिल भवन में निवास कर रहे श्रीनिवास के पास पहुँच कर साष्टांग दंड प्रणाम किया। श्रीनिवास ने भी शुक महर्षि को आलिंगन सत्कार से तुष्ट कर, उचितासन पर उन्हें बिठाया और आप भी आसान पर बैठ गया। कुशल समाचार के बाद शुक महर्षि ने आकाश राजू का सन्देश और पद्मावती से उनके विवाह की आह्वान पत्रिका को उनके हाथों दिया तो श्रीनिवास ने बार-बार उस पत्रिका को पढ़वाकर आनंद तरंगित हो गया और कहा, 'आप जैसे तपो निधियों के आशय इसी तरह शुभ फल देते ही हैं, आपके सहयोग के कारण ही मैं भू की रक्षा का भार संभल रहा हूँ। आप जैसे तपोनिधियों के प्रति सदा सर्वदा मेरे मन में अनुराग ही अनुराग रहता है। आपकी आज्ञा मेरे लिए शिरोधार्य है। आकाश राजू सुधर्म का सुपुत्र है। पुण्यात्मा है। धर्मानुयायी है। मात्र राजा के रूप में ही नहीं, प्रजा की प्रतिनिधि के रूप में भी प्रजा के कल्याण में वह सदा लगा रहता है। पूर्व जन्मों के पुण्यों के कारण पुत्रिका बनी पद्मावती का विवाह मुझसे करवाने का उनका यह निर्णय तो बड़े ही आनंद की बात है। उनके इस लेख का सही तरह उत्तर देना मेरा कर्तव्य है।' इस तरह कहकर श्रीनिवास ने अपने होने वाले श्वशुर जी को विनय से उत्तर लिखा कि 'आपकी प्रिय पुत्री पद्मावती से विवाह के लिए मेरी सम्पूर्ण स्वीकृति है। मुहूर्त के समय तक बंधू, परिवार और मित्रों के साथ नारायण पुरम हम

पहुँच जायेंगे।' वकुलम्मा को भी बुलाकर इस समाचार को उसे भी श्रीनिवास ने सुनाया कि 'वैशाख शुक्ल दशमी गुरुवार के दिन, रात फलाने समय पर हमारा विवाह संपन्न होगा।' वहाँ उस समय ख़ुशी की लहरें दौड़ गयीं। शुक महर्षि को वकुलम्मा ने अच्छे फल और शहद को उपाहार के रूप में दिया तो उन्होंने सानंद स्वीकारा। श्रीनिवास के लेख को लेकर शुक महर्षि श्रीनिवास के साथ वराह स्वामी के पास पहुँचा और विवाह के समाचार को उन्हें भी सुनाया तो उन्होंने भी आनंद व्यक्त कर अपनी स्वीकृति भी दे दी। तदनंतर शुक महर्षि ने वराह स्वामी से आज्ञा लेकर श्रीनिवास से विदा ली।

शुक महर्षि ने नारायणपुरम पहुँच कर आकाश राजू को श्रीनिवास के लेख को दिया तो उसने भी आनन्दाश्रु पूर्ण नेत्रों से उसको पढ़ा और शुक महर्षि को कृतज्ञता प्रकट की। विवाह से सम्बंधित कार्यों की सूची शुक महर्षि के आज्ञानुसार तैयार कर अपने परिवार जनों को सौंप दिया। अपने भाई तोंडमान तथा पुत्र वसुनायक से कहा कि वर के परिवार की सुविधाओं पर प्रत्येक ध्यान दिया जाय। वेद पंडितों और पुरोहितों से प्रार्थना की कि विवाह को वैभव रीति में संपन्न होने के लिए सारी जागरूकताएँ लें।

शुक महर्षि से आकाश राजू ने प्रार्थना की कि विवाह के संपन्न होने तक कृपया यहीं रुकें। उन्होंने भी सानंद स्वीकारा।

20. अपने विवाह के लिए देवताओं और महर्षियों को श्रीनिवास को आह्वानित करना

शुक महर्षि के जाने के बाद श्रीनिवास ने वकुलम्मा तथा वराह स्वामी से चर्चा कर अपने विवाह के लिए देवताओं और महर्षियों को

आह्वानित करने का निर्णय ले लिया। विवाह आह्वान पत्रिकाओं को भी तैयार कर गरुड़ तथा आदि शेष को बुलाकर उन्हें अपने विवाह समाचार को बताकर आनंदित किया और कहा, 'हे गरुड़! तुम सत्य लोक, तपोलोक तथा ब्रह्मादि तपोनिधियों को इन आह्वान पत्रिकाओं को देना। हे आदि शेष! तुम कैलाश तथा नाग लोक जाकर शंकर तथा वासुकी को इस आह्वान पत्रिका को देना! और आप दोनों मेरी तरफ से उन्हें आह्वानित करना।' देवेंद्र तथा बृहस्पति आदियों को अपने प्रिय दूतों के द्वारा आह्वान पत्रिकाएँ उन्होंने भेजी।

गरुड़ पहले सत्य लोक पर पहुँचा। जहाँ भी सुनें, चतुर्वेदों का पावन नाद! उसने थोड़ी देर रुककर तन्मयता से उनका आनंद लिया और बढ़कर ब्रह्मा जी के भवन पर पहुँचा तथा द्वार पाल के द्वारा उनके दर्शन की प्रार्थना की। ब्रह्मा जी ने गरुड़ को सादरपूर्वक अंदर बुलाया और विष्णु जी के कुशल समाचार के बारे में पूछा। गरुड़ ने विवाह की आह्वान पत्रिका उनके हाथों दे दी तो उन्होंने सानंद उसे पढ़कर गरुड़ जी को सम्मानित भी किया। अपनी पत्नी वाणी को भी आह्वान पत्रिका को उन्होंने पढ़कर सुनाया। अपने सेवकों को बुलाकर उन्होंने आज्ञा दी कि ढिंढोरा पीटकर सभी सतलोक वासियों को बता दिया जाए कि भारत देश के दक्षिण भाग में स्थित वेंकटाचल पर संपन्न होने वाले इस विवाह के लिए सारे सत्य लोक वासी, एक दिन पहले ही वहाँ पहुँचें और विवाह की शोभा अपनी उपस्थिति से बढ़ाएँ और उसे संपन्न करें।

ब्रह्मलोक से गरुड़, तपोलोक में पहुँच कर वहाँ के सभी तपोधनों को विवाह की पत्रिका दे दी। उन सभी तपोधनों ने उसको भक्ति तथा श्रद्धा से पढ़कर निर्णय ले लिया कि अवश्य इस विवाह को हम सब जाएँगे।

आदिशेष ने पहले कैलाश पहुँचकर शिव पार्वती के दर्शन कर उन्हें पद्मावती श्रीनिवास के विवाह की पत्रिका दी। उन दोनों ने पत्रिका को सहर्ष पढ़कर सपरिवार विवाह को जाने का निर्णय ले लिया और तत्क्षण भृंगी, नंदी को बुलाकर वेंकटाचल जाने की तैयारियाँ करने की आज्ञा भी दे दी।

तदनन्तर आदि शेष पाताल लोक जाकर वासुकि तथा अन्य नागलोक वासियों से मिला और पद्मावती श्रीनिवास की विवाह पत्रिका बाँटकर वापस वेंकटाचल आ गया। गरुड़ भी तब तक ब्रह्म लोक से वापस वहाँ आ पहुँचा था। फिर से दोनों विवाह सम्बन्धी कामों में जुट गए।

21. ब्रह्मादि देवता तथा अनेकों महर्षियों का वेंकटाचलपति के विवाह को सम्पन्न करने वेंकटाचल पहुँचना

शुभ मुहूर्त की वेला तक वेंकटाचल पहुँचने के लिए सरस्वती, सावित्री, गायत्री देवियों संग ब्रह्मा जी अपने हँस वाहन पर निकल पड़े। ब्रह्मा के मानस पुत्र नारद जी तथा अन्य सत्यलोक वासी भी उनके साथ निकले। उन सबके आगमन समाचार को सेवकों द्वारा पाकर उन्हें आह्वानित करने के लिए गरुड़ पर आरूढ़ होकर वेंकटाचलपति, प्रधान द्वार तक पहुँचे। पिता जी को देखते ही पत्नी समेत ब्रह्मा ने अपने वाहन से उतरकर उन्हें साष्टांग दंड प्रणाम समर्पित किया। श्रीनिवास ने भी गरुड़ से उतरकर विरिंचि को आलिंगन सत्कार से सम्मानित किया तथा उनके साथ आये हुए अतिथियों का कुशल मंगल पूछकर अपने निवास में ले गया और विवाह के संपन्न होने तक उनके सानंद से रहने की व्यवस्था करने की आज्ञा, गरुड़ को दे दी।

श्रीनिवास और ब्रह्मा दोनों एक जगह पर बैठ गए। उस समय श्रीनिवास ने पद्मावती की जन्म कथा से लेकर आकाश राजू तथा अब इस विवाह तक की सारी कहानी को विस्तार रूप से उन्हें बताया। सब आनंदित हो गये। इतने में वकुलम्मा ने भी वहाँ आकर उन सब को उचित रीति में आह्वानित किया। उसके बारे में भी उन श्रीनिवास के द्वारा सुनकर उन सबने भी वकुलम्मा को श्रीनिवास की माताजी के रूप में अत्यंत भक्ति से गौरव सम्मान दिया।

विवाह के लिए सर्वप्रथम अपने घर आये हुए अपनों को भी श्रीनिवास ने विवाह से सम्बन्धित कार्यों में जुटा दिया।

उनके बाद पार्वती, गणपति, कुमारस्वामी आदि अपने परिवार के साथ परमेश्वर जी भी वहाँ पधारे तो श्रीनिवास ने उनका भी सादर आह्वान कर उनके रहने की व्यवस्था करने गरुड़ को नियुक्त किया। तदनंतर विवाह के लिए आये हुए इन्द्रादि दिक् पाल, बृहस्पति, चंद्र, सूर्यादि देवी देवताओं के आगमन पर वेंकटाचलपति ने उन सबों के रहने की व्यवस्था करवाई। विवाह समारोह के लिए आये हुए सभी अतिथियों के रहने के लिए एक सर्व व्यवस्थित नगर बनाने की इच्छा श्रीनिवास ने देवेंद्र के सामने प्रकट की तो उन्होंने उसी क्षण विश्व कर्मा को बुलाकर, सभी सुविधाओं के साथ एक नगर का निर्माण करने को कहा। देवेंद्र की आज्ञा के अनुसार विश्वकर्मा ने त्वरित गति से अनति काल में ही एक दिव्य नगर का निर्माण कर दिया। इसके बाद इंद्र ने श्रीनिवास जी की आज्ञा के अनुसार नारायणपुरम जाकर आकाश राजु से मिला और पद्मावती श्रीनिवास के कल्याण के लिए उपयुक्त रीति में सभी सुविधाओं के साथ रसोईघर, सरोवर, उद्यान, सेवक सेविकाओं से युक्त एक दिव्य भव्य विशाल मंडल का निर्माण करवाया।

वे सब बहुत ही खूबसूरत भी थे। किसी ने सपने में भी सोचा तक न था कि पद्मावती का विवाह इतनी धूम धाम से नारायणपुरम में होगा। नारायण पुरम सच ही में आज एक दिव्य नगर हो गया है।

वेंकटाचल में अब हर तरफ अनेकों महर्षियों तथा देवी देवताओं की भीड़ ही भीड़ दिखाई दे रही थी। बृहस्पति भी श्रीनिवास जी की आज्ञा के अनुसार आकाश राजू के यहाँ जाकर विवाह से सम्बन्धित कार्यों के निर्वाह में जुट गए।

विवाह समारोह में शामिल होने आये हुए देवी देवताओं के आदर सत्कार का भार पार्वतीश जी को सौपा गया। भोजन की सुविधाओं को सँभालने का भार ब्रह्मा जी को, चन्दन, ताम्बूल देने का काम मन्मथ तथा कुमार स्वामी को, रसोई का भार अग्नि देवता को श्रीनिवास ने सौंपा। जल वितरण के लिए वरुण देवता, सुगंध परिमल वातावरण के लिए वायु देवता नियुक्त हो गए। सभी काम विविध देवताओं को सौंपे जाने के कारण, सुचारु रूप से सभी सेवाएँ अतिथियों की सुविधा में जारी थीं।

वशिष्ट जी ने श्रीनिवास जी को बताया कि विवाह मुहूर्त के पहले पुण्याह वाचन, कुल देवता की प्रार्थना, मंगल स्नान आदि अवश्य होने होंगे। तब श्रीनिवास जी ने बताया कि लक्ष्मी के बिना मैं ये सब नहीं कर सकता हूँ। तब श्रीनिवास जी की अनुमति से ब्रह्मा ने लक्ष्मी देवी को करवीर पुर से लाने के लिए सूर्य देवता को भेजा। सूर्य अपने सप्ताश्वों के रथ पर करवीर पुर गया और लक्ष्मी देवी को सारा वृत्तांत बताकर उनसे प्रार्थना की तो उन्होंने भी मान लिया और वेंकटाद्रि के लिए रवाना हो गयीं। श्रीनिवास जी ने उन्हें सादर पूर्वक आह्वानित कर वेदवती के वृत्तांत को सुनाकर कहा कि रामावतार की

वेदवती ही अब की पद्मावती हैं। लक्ष्मी जी ने त्रेतायुग में अरण्य वास तथा लंका वास के सन्दर्भ में वेदवती की सहायता का स्मरण कर, उन दोनों के विवाह के लिए अपनी स्वीकृति दे दी और कहा, 'हे नाथ! वैकुण्ठवासा! आपकी लीलाओं को कौन पहचान सकेगा? मुझे क्षमा करो कि मैं आपको छोड़कर धरा पर आ गई। लेकिन यह भी लोक कल्याण के लिए ही हुआ है न?' श्रीनिवास जी ने लक्ष्मी जी को गले लगाकर उसे आनंदित किया और कहा, 'हे देवी! हाँ, इस लीला में हम दोनों भागीदार हैं।' इतने में ब्रह्मा ने आकर कहा, 'हे माँ! विवाह का मुहूर्त आ गया है। पिताजी को मंगल स्नान के लिए ले जाइये।' सरस्वती, पार्वती तथा अरुंधति के साथ मिलकर लक्ष्मी देवी ने मंगल द्रव्यों को थाली में सामने रखकर शास्त्रोक्त रीति में श्रीनिवास जी से मंगल स्नान करवाया। स्नान के बाद श्रीनिवास ने पीताम्बर धारण कर, पुष्करिणी के सामने अलंकृत वेदी पर बैठकर ऊर्ध्व पुंड्र, कुबेर द्वारा दिए गए दिव्य आभूषणों से सुसज्जित हुआ और संध्या वंदन किया। तदनन्तर कश्यप, अगस्त्य, वशिष्टादि ऋषियों का चरण स्पर्श किया। तो उन्होंने वेदोक्त मन्त्रों के उच्चारण के साथ 'शीघ्रमेव कल्याण सिद्धिरस्तु!' कह दिया तो वहाँ के सभी देवी देवताओं ने भी सानंद उनका अनुसरण कर कहा 'तथास्तु!' विवाह से सम्बंधित तदनंतर कार्यक्रमों को वशिष्ट महर्षि ने शास्त्रोक्त रीति में श्रीनिवास जी से पुष्करिणी के पास की मौक्तिक वेदी पर करवाया।

उसके बाद श्रीनिवास के साथ सभी महर्षियों ने मंगल वाद्यों के साथ कुमार धारा तीर्थ पर जाकर शमी वृक्ष की पूजा उनसे करवाई तथा शमी वृक्ष की एक छोटी सी डाली को लेकर पुष्करिणी तीर्थ पर आये। वहाँ वराह स्वामी के मंदिर के पास उसकी स्थापना करवाई। इस तरह विवाह के लिए नांदी (प्रारम्भ) सम्पन्न हो गयी।

22. विवाहार्थ कुबेर से श्रीनिवास जी का उधार लेना

इस कार्यक्रम के बाद श्रीनिवास ने ब्रह्मा से कहा कि अतिथियों को विवाहार्थ नारायण पुर रवाना होने की तैयारियाँ करें। ब्रह्मा ने कहा, 'यहाँ इस कार्यक्रम के बाद, भोजन किये बिना विवाह के लिए हम लोगों को निकलना नहीं चाहिए। यह हमारा सम्प्रदाय है।' श्रीनिवास ने कहा, 'मेरे पास इतने सारे अतिथियों के भोजन तैयार करवाने के लिए आवश्यक धन राशि नहीं है।' श्रीनिवास की बातों को सुनकर शिव जी ने कहा, 'ऐसा नहीं कहते। किसी भी शुभ कार्य का प्रारम्भ कर, रोकना नहीं चाहिए। उधार लेकर ही सही, कार्यक्रम को सम्पन्न करना ही होगा।' तब श्रीनिवास ने कुबेर को बुलाया और ब्रह्मा तथा शिव को भी साथ लेकर, पुष्करिणी तीर्थ के तट पर जो अश्वत्थ वृक्ष है, उसके यहाँ चला गया और कुबेर से कहा, 'हे कुबेर! इस कलियुग में तो मेरा विवाह होना ही है। युग, काल, देश की परिस्थितियों के अनुसार मेरा यहाँ अवतरित होना तो अनिवार्य है। इसीलिए मेरे विवाह के लिए युग तथा समय के अनुसार मुझे उधार दो। मैं भी युगानुसार उधार चुकाता रहूँगा।' कुबेर ने कहा, 'ठीक है। युगानुसार उधार चुकाने के बारे में पत्र पर लिखकर मुझे देंगे तो मैं उधार दूँगा।' वेंकटलपति ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर इस तरह पत्र लिखा, 'पंडितों ने निर्णय किया कि विलम्बी नाम वत्सर के वैशाख शुद्ध दशमी के दिन नारायण पुरम के राजा, आकाश राजू की प्रिय पुत्री पद्मावती से मेरा विवाह होगा। इस विवाहार्थ लंकाधीश कुबेर से मैं ने उधार के रूप में चौदह संख्या वाले श्री राम की मुद्रा वाले सिक्कों को लिया। इस ऋण पत्र के द्वारा मैं प्रकट कर रहा हूँ कि युग, देश और समयानुसार, मुझे मेरे भक्तों द्वारा दिए जाने वाले

उपहारों में से सौ राम मुद्रिकाओं के लिए एक राम मुद्रिका को कर के रूप में चुकाने के लिए मेरी सम्मति को प्रकट कर रहा हूँ।'

गवाही : ब्रह्मा, महेश्वर, अश्वत्थ

कृते श्री वेंकटाचलपति, तिरुमल

ऋणपत्र को लेकर कुबेर ने धन राशि दे दी। तत्क्षण वेंकटाचलपति ने इस कार्यभार को कुबेर को ही सौपा। गुड़, शक्कर, घी, दूध, भोजन के लिए पत्ते, तरकारियाँ ही नहीं, विवाह के लिए आवश्यक वस्त्र, आभूषण, इलाइची, लौंग, भोजन के बाद दक्षिण ताम्बूलादियों को तैयार करने की जिम्मेदारी कुबेर की ही होगी। वेंकटाचलपति की आज्ञा पर अग्नि देवता को रसोई का भार सौंपा। पञ्च भक्ष्य, क्षीरान्न, लेह्य, चोष्य, सूप, विविध व्यंजन, पानियादिकों को तैयार कर अग्नि देवता ने श्री वेंकटाचलपति से कहा कि भोजन करने अतिथियों को आह्वानित किया जाय। सर्वप्रथम उन सभी व्यंजनों को नृसिंह स्वामी को समर्पित करने के बाद सभी देवताओं को भोजन के लिए आह्वानित किया गया। विवाह के लिए आये हुए देवी देवता, पांडव तीर्थ से लेकर श्रीशैल तक विविध पंक्तियों में बैठकर केले (कदली) के पत्तों में परोसे गए मिष्टान्न भोजन का आस्वादन करते समय श्री वेंकटचलपति ने आकर उन सब से कहा, 'हे देवी देवतागण! भोजन में देरी के लिए तथा भोजन में व्यंजनों की कमी के लिए मुझे क्षमा करें। भोजन को स्वीकारें और मुझे कृतार्थ करें।' देवी देवताओं ने समाधान के रूप में कहा, 'हे श्रीनिवास! कैसी देरी और कैसी कमी? आपके द्वारा दिया गया यह स्वादिष्ट भोजन हमारे लिए अमृत समान है। मुक्ति का साधन है। हम सभी धन्य हो गए, कृतार्थ हो गए।' उन सब के भोजन के बाद कुबेर ने उन्हें ताम्बूल

युक्त दक्षिणा दी। तदनंतर श्री वेंकटाचलपति, लक्ष्मी, ब्रह्मा, महेश्वर तथा वकुलम्मा ने भी भोजन किया। तब तक तार होने के कारण वे सभी सो गए।

23. परिवार सहित विवाह के लिए वेंकटाचलपति का नारायण पुरम पहुँचना

उधर नारायण पुरम में विवाह की तैयारियाँ जोरों पर थीं। सारी वीथियाँ, खूब सजायीं गयीं। नागरिक भी अपने घर द्वार को भी बंदनवार, विविध फूलों, हल्दी कुमकुम से सुन्दर रीति से अलंकृत कर, पद्मावती श्रीनिवास के विवाह की पावन घड़ियों की प्रतीक्षा उत्सुकता से करने लगे।

तोंडमान की निगरानी में मयूर द्वारा सहस्र खम्भों की नवरत्न खचित विवाह वेदी का निर्माण हुआ। तोंडमान ने मोतियों की मालाओं से उसे सम्पूर्णतया सजाया। रत्न तथा स्वर्ण की कांतियों से अद्भुत तरीके से प्रकाशमान किया। देवी देवताओं, महर्षियों और पुर प्रजा के बैठने के लिए सुविधाजनक आसनों की व्यवस्था करवाई। विवाह का मुहूर्त रात में होते हुए भी बिना किसी ज्योतियों के भी वेदी के परिसर भरपूर कांति से प्रकाशमान होने की व्यवस्था विविध रत्नों की सजावट के द्वारा की गयी। उधर तिरुमल पर देवी देवतागण प्रभात वेला में स्नानादिक तथा वैदिक कार्यक्रमों के बाद उपहार लेकर नारायण पुरम के लिए वेंकटचलपति के साथ निकल पड़े।

उधर नारायण पुरम में शुक महर्षि ने वसुनायक तथा तोंडमान को समझाया कि बृहस्पति के कथनानुसार विवाहोचित कार्यक्रमों का निर्वाह करें। तदनंतर आकाश राजू की आज्ञा लेकर विवाह के लिए आ रहे वेंकटाचलपति सहित देवी देवताओं का आह्वान करने की

प्रतीक्षा पद्म सरोवर के पास करने लगे। सर्वप्रथम गरुड़ पर आरूढ़ होकर वेंकटाचलपति, उनके पीछे वकुलम्मा, लक्ष्मी, मन्मथ तथा ब्रह्मा पधारे। उनके पीछे-पीछे बाकी देवी देवतागण तथा महर्षि बृन्द, अपने-अपने के लिए उपयुक्त रथ, अश्व, पालकी आदि वाहनों पर पहुँचने लगे। मृदंग, भेरी आदि मंगल वाद्यों के कलाकार, नारद, तुम्बुरादि गायक, रम्भा, ऊर्वशी आदि नर्तकी गण, किन्नर, किम्पुरुषादि गंधर्व भी अत्युत्साह से आते हुए दिखाई दिए।

आकाश में गरुड़ जी को देखते ही शुक महर्षि ने साष्टाङ्ग दंड प्रणाम किया। वेंकटाचलपति ने उन्हें देखते ही गरुड़ से नीचे उतरकर शुक महर्षि को गले लगाकर सम्मानित किया। शुक महर्षि ने श्रीनिवास से प्रार्थना की कि अपने आश्रम में पधारें। श्रीनिवास ने कहा कि 'विवाह में जाने के लिए देरी हो जाएगी।' 'थोड़ी देर की तो बात है!' श्रीनिवास ने मान ली। शुक महर्षि ने बहुत ही आनंदित होकर अपने पास उपलब्ध कन्द मूल फलों से व्यंजन बनवाकर श्रीनिवास तथा उनके परिवार जनों का अतिथि सत्कार किया। श्री वेंकटाचलपति की महिमा के कारण वे सभी डकारने लगे और उन्हें लगा कि उन सब ने भरपूर खा लिया है। उन्होंने शुक महर्षि की खूब तारीफ की। वहाँ से वेंकटाचलपति अपने परिवार तथा अतिथियों के साथ नारायण पुरम के लिए रवाना हो गए।

24. आकाश राजू का वेंकटाचलपति को परिवार सहित आह्वानित करना

नारायण पुरम में जोरों से मंगल तूर्य नाद सुनाई देने लगे। लक्ष्मी कल्याण, गौरी कल्याण आदि गीतों को गाती हुई राज परिवार की

सुमङ्गलियों ने पद्मावती से मंगल स्नान करवाकर, रेशमी साड़ी पहनाई। केश राशि को संवारा और सुगन्धित फूलों से उन्होंने पद्मावती को सजाया। माँ धरणी देवी द्वारा दिए स्वर्णाभूषणों को पहनाया। कुल देवता की पूजा करवाकर, देवी देवताओं को चन्दन ताम्बूलादियों को दिलवाने के बाद आरती उतारी गयी। तदनंतर विवाह के लिए आयी हुईं वरिष्ठ सुहागिनियों, पुरोहितों की गृहिणियों तथा नारायण पुरम की सुहागिनियों को हल्दी कुमकुम ताम्बूलादियों तथा नए वस्त्रों को पद्मावती माई के द्वारा उन्होंने दिलवाया। उन सभी सुहागिनियों ने पद्मावती को अपने अमूल्य आशीष भी दिए। श्रीमन्नारायण की पूजा अर्चना तथा आरती के बाद पद्मावती ने भक्ति पूर्वक उन्हें अपना नमन समर्पित किया। उसके बाद पुर प्रमुखों, सुहागिनियों, बंधू जनों और बृहस्पति आदि ने आनंद भरित मनों से पद्मावती को 'दीर्घ सुमंगली भव! सदा सुखी भव' कहते हुए अपने अमूल्य आशीष दिए। उन सभियों के मिष्टान्न भोजन के बाद वसु नायक ने गौरव सम्मान से उन्हें चन्दन ताम्बूलादिकों को दिया। तदनंतर आकाश राजू ने अपने परिवार सहित भोजन किया।

आकाश राजू को अपने कर्मचारियों के द्वारा पता चला कि विवाह के लिए श्रीनिवास जी अपना परिवार तथा देवी देवताओं के साथ नारायण पुरम पहुँच रहे हैं। इसलिए आकाश राजू ने धरणी देवी से पद्मावती को जल्दी दुल्हन की वेश भूषा में सजाने को कहा। उसके तैयार होने के बाद खुद अपनी पत्नी, पुत्र, पुत्रिका पद्मावती, परिवार तथा पुरोहितों के साथ श्रीनिवास जी को आह्वानित करने मंगल तूर्य नादों, नए वस्त्राभूषण, फल पुष्पादियों तथा ऐरावत की तरह अलंकृत गज राज सहित निकल पड़े। होने वाले श्वसुर (मामाजी) को देखते ही श्रीनिवास जी गरुड़ वाहन से उतर गए। आकाश राजू ने भी रथ से

उतरकर पत्नी धरणी देवी, पुत्री पद्मावती, पुत्र वसुनायक तथा परिवार के साथ होने वाले दामाद का सादर आह्वान किया और कहा, 'मेरा जन्म धन्य हो गया है।' नूतन वस्त्राभूषणों से सम्मानित कर मुँह मीठा करने के लिए सभी को शर्करासव भी दिया। इस बीच श्रीनिवास तथा पद्मावती की आँखें मिलीं। श्रीनिवास के साथ आये हुए सभी अतिथियों का यथोचित रीति से सत्कार भी आकाश राजू ने किया। तदनन्तर श्रीनिवास कोगज पर तथा पद्मावती को पालकी में बिठाकर मंगल तूर्य नादों के साथ नारायण पुरम की वीथियों में से होते हुए विवाहार्थ श्रीनिवास जी के ठहरने के भवन पर सब पहुँच गए। रास्ते में नारायण पुरम के नागरिक और सुहागिनियों ने प्रसन्न चित्तों से श्रीनिवास तथा पद्मावती पर फूलों की वर्षा की। उस भवन के प्रवेश द्वार पर तोंडमान की पत्नी ने श्रीनिवास की आरती उतारी और तोंडमान ने नारियल के फल से उनकी दीख उतारी। मंगल नादों के बीच श्रीनिवास जी ने परिवार सहित भवन में प्रवेश किया।

श्रीनिवास ने कुबेर को बुलाकर कहा, 'आप जाकर आकाश राजू से कह दीजिये कि मुहूर्त की वेला से खूब पहले ही भोजनादिकों का होना सम्प्रदाय है।' कुबेर ने इस बात को आकाश राजू तक पहुँचा दी तो उसने भी अतिथियों के भोजनादिकों का प्रबंध अतिशीघ्र करवा दिया और भोजनोपरांत, सभी देवी देवताओं, महर्षियों तथा पुरोहितों को दक्षिणा सहित ताम्बूलादिकों से तृप्त किया।

25. भवन से विवाहार्थ श्रीनिवास जी को विवाह मंडप तक आकाश राजू का लाना और पद्मावती श्रीनिवास का विवाह संपन्न होना

वैशाख शुद्ध दशमी के दिन विवाह के लिए शुभ मुहूर्त की वेला के आस पास, आकाश राजू ने अपने भतीजे को बुलाकर कहा कि

वर की पूजा का प्रबंध किया जाय। उसकी आज्ञा के अनुसार सारे प्रबंध किये गए। तब शुक महर्षि तथा बृहस्पति के साथ आकाश राजू, बृहस्पति, शुक महर्षि आदियों, शुद्धान्त कान्ताएँ, नगर की सुहागिन स्त्रियाँ, सकल बंधु मित्रों के साथ, मंगल तुर्य नादों के बीच, नूतन वस्त्राभरण, सुगंधित फूल मालाएँ, चन्दन ताम्बूलादि सकल सामग्री के साथ श्रीनिवास जी भवन पहुँच गए। सर्वालंकृत गजराज को महावत लेकर आया। उसके साथ असंख्य रोशनदानों को लेकर कई कर्मचारियों के झुण्ड भी निकल पड़े। इस कारण रात का समय भी दिन की तरह प्रकाशमान हो गया। वर श्री वेंकटाचलपति भी सज धजकर वेदी पर रखे रत्न सिंहासन पर बैठ गए। ब्रह्मादि देवतागण वशिष्टादि महान ऋषि, सिद्ध, साध्यादि आह्वानित अतिथियों के बीच सुधाकर जैसे श्रीनिवास जी आसीन थे। आकाश राजू को आते हुए देख श्रीनिवास ने उनके पास जाकर आलिंगन कर कहा, 'इस छोटे से काम के लिए आप ने क्यों तकलीफ ली? इस युवक को भेज दिए होते तो काफी था।' आकाश राजू श्रीनिवास की इस क्रिया से बहुत ही आनंदित हो गया।

तब वशिष्ठ ने आकाश राजू से वर पूजा करने को कहा। आकाश राजू ने यह बात अपनी धर्मपरायण पत्नी धरणी देवी को बतायी। धरणी देवी अरुंधति के नेतृत्व में सुमङ्गलियों के मंगल गीतों और मंगल वाद्यों के बीच वेंकटचलाधिपति के पास पहुँची जो रत्न सिंहासन पर विराजमान थे। उन्हें धरणीदेवी ने नूतन वस्त्राभरण तथा पुष्प मालिकाएँ भेंट के रूप में दीं। नव वस्त्रों में वेंकटाचलपति को देखकर धरणी देवी को लगा कि उसका जन्म धन्य हो गया।

बृहस्पति, वशिष्ठादि ऋषि गण, देवी देवता और उस नगर के नागरिकों ने भी उसी समय वेंकटाचलपति के दिव्य दर्शन से महदानन्द का अनुभव किया।

मुहूर्त के समय पुरोहितों ने आकाश राजू से विनती की कि जल्दी वर श्रीनिवास को लाएँ। आकाश राजू ने श्रीनिवास को सर्वालङ्कृत गजराज के यहाँ लाया और विवाह के लिए आह्वानित पुर प्रमुखों के सामने, श्रीनिवास गज पर आरूढ़ हो गये। नारायण पुरम की अलंकृत वीथियों में, गजराज पर आरूढ़ श्रीनिवास जी मंगल वाद्यों के बीच विवाह मंडप की तरफ निकल पड़े। नगर की सुमङ्गलियाँ उनकी आरती उतारने लगीं। हर एक गली में आतिशबाजी हो रही थी। वैदिक पंडित वेद का पाठन कर रहे थे। स्त्रियाँ विवाह से सम्बंधित मधुर गीत गा रहीं थीं। गजराज भी धीमी चाल से विवाह मंडप पहुँच गया। वेंकटचलपति गजराज से उतरकर विवाह मंडप के मुख्य द्वार पर खड़े हो गए। तोंडमान की पत्नी ने सुमङ्गलियों के साथ उनकी आरती उतारी। वसुधान ने होने वाले जीजा जी को विनय पूर्वक विवाह वेदी के सामने तैयार रत्न खचित सिंहासन पर बिठाया। मंगल वाद्यों के बीच पुरोहितों ने स्वस्ति पाठ किया।

ब्रह्मादि देवी देवतागण, इन्द्रादि दिक् पालक, नारद, तुम्बुरु आदि भक्त, गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष, नाग जाति के प्रमुख, कल्याण मंडप के सामने अपने-अपने निर्धारित आसनों पर आसीन थे। वशिष्ट तथा बृहस्पति की आज्ञा के अनुसार अन्य मुनि वृन्द भी विवाह वेदी के सामने उपविष्ट थे।

स्वामि पुष्करिणी के पवित्र जल को पहले से ही लाकर विवाह वेदी के पास कलशों में रखा गया था। वशिष्ट ऋषि विवाह के

शुभारम्भ की पूजा विधि में मग्न थे। इसके लिए आवश्यक वस्तुएँ, दूध, घी, समिधाएँ आदि वहीं पर रखे हुए थे। रजत से बने लम्बे दीप स्तम्भों की कांति से विवाह मंडप कांतिमय था। वशिष्ठ तथा बृहस्पति के द्वारा विवाह मंत्रों के बीच, पुरोहित विवाह के अन्य कार्यक्रमों को आगे बढ़ा रहे थे। वशिष्ठ ने मधु पर्कों को श्रीनिवास के हाथों में दिया। धरणी देवी पुष्करिणी जलों को कनक कलशों में लायी। सोने की थाली में श्रीनिवास ने अपने चरणों को रखा और धरणी देवी तथा आकाश राजू ने उन पावन चरणों को पुष्करिणी के जल से धोया। तदनन्तर उस जल को अपने तथा अपने परिवार के सिरों पर प्रोक्षित कर वे दोनों अत्यंत आनंदित हुए। ऋषि वशिष्ठ के पवित्र मंत्रोच्चारण के बीच कुमकुम, पुष्पाक्षतों से श्रीनिवास के चरण कमलों की पूजा भी राज दम्पति ने की और आरती भी उतारी। तदनन्तर सालंकृत कन्यादान की विधि का शुभारम्भ हुआ।

पद्मावती का अद्भुत श्रृंगार सुमङ्गलियों ने किया। जूही के सुमनों से वेणी को उन्होंने सजाया। मांग टीका, चूड़ामणि, सेलडी, मुक्ताटीका आदि शिरोभूषणों से सजाया। रेशमी साड़ी तथा कंचुकी पहना दी। विविध कंठाभूषण पद्मावती की सुंदरता को बढ़ा रहे थे। दीख उतारने के लिए दाहिने कपोल पर कस्तूरी की बिंदी रखी गयी। चरण तल पर लाक्षा शोभा दे रही थी। अरुंधती आदि पुण्यांगनाओं ने पद्मावती को सप्रेम लाकर श्रीनिवास के दाहिनी तरफ सजाये गए आसन पर माँगलिक गीतों को गाते हुए बिठाया। कन्यादान से पहले आकाश राजू ने श्रीनिवास को एक करोड़ स्वर्ण सिक्कों को वर दक्षिणा के रूप में समर्पित किया। साथ ही विशिष्ट स्वर्ण मुकुट, हीरों के हार, नव रत्नों के कंठाभरण, स्वर्ण की अंगूठियाँ, हीरों से बना कटि हस्त, रत्न खचित स्वर्ण पादुकाएँ, असंख्यक जल पात्र आदि

अनेक राजोचित मर्यादाओं को गज, तुरग, गो सम्पदा सहित उपहार के रूप में राज दम्पति ने समर्पित किया। वशिष्ठ बृहस्पतियों के पवित्र मंत्रोच्चार के बीच, आकाश राजू ने अपनी प्रिय पुत्री पद्मावती को, श्रीनिवास के हाथों कन्यादान किया और पद्मावती श्रीनिवास की अर्थांगिनी बनी। वशिष्ट ऋषी ने श्रीनिवास से कंकण धारण करवाया तथा उसके हाथों पद्मावती को कंकण धारण करवाया। बृहस्पति ने कन्या के वंश का विवरण दिया - ''यह कन्या अत्रि गोत्र में जन्मी है। सुवीर महाराजा की प्रपौत्री, सुधर्म राजू की पौत्री तथा आकाश राजू की पुत्री, पद्मावती नामक इस कन्या को तुम्हें आकाश राजू कन्यादान के रूप में दे रहे हैं।'' तदनंतर वशिष्ट ऋषि ने श्रीनिवास के बारे में कहा, ''वशिष्ट गोत्र में जन्में, ययाति के प्रपौत्र, शूर के पौत्र तथा वासुदेव के पुत्र श्री वेंकटेश्वर, अत्रि गोत्र में जन्मी पद्मावती को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार रहे हैं।'' इस आनंद समय में, भूम्याकाश मंगल वाद्यों के नाद से गूँज उठे। धरणी देवी तथा आकाश राजू ने मांगलिक जल को श्रीनिवास के दाहिने हाथ में छोड़ा और इस तरह कन्यादान का कार्यक्रम दिव्य भव्य रीति में संपन्न हुआ।

अरुंधति आदि सुमङ्गलियाँ, मांगलिक गीत गा रही थीं। वशिष्ट ऋषि तथा पुरोहित कल्याण सम्बन्धी मन्त्रों का उच्चारण कर रहे थे कि श्रीनिवास ने पद्मावती के गले में मंगल सूत्र को बाँध दिया। उस पावन क्षण में देवी देवता, महर्षियों तथा सभी आह्वानित सभासदों ने नवरत्नाक्षतों को वर तथा वधु पर डालकर अपने आशीष दिए। वशिष्ट ने तीन-तीन बार श्रीनिवास के हाथों से पद्मावती के हाथों द्वारा तथा पद्मावती के हाथों से श्रीनिवास के हाथों द्वारा लाज होम करवाए। तदनन्तर वैखानस पुरोहित ने पद्मावती तथा श्रीनिवास से आगे की विवाह विधियों को सम्पूर्णतया करवाया।

तदनन्तर आकाश राजू ने अपने अनुज के द्वारा विवाह में आये हुए सभी अतिथियों को दक्षिणा युक्त पुष्प, फल, चन्दन ताम्बूलादियों को दिलवाया। सम्प्रदायानुसार, वर वधु के अत्यंत निकट बंधु जन मुहूर्त के संपन्न होने तक निराहार ही थे। इसलिए विवाह के संपन्न होने के तुरंत बाद, उन दोनों समूहों ने विशेष स्वादिष्ट आहार लिया।

अगले दिन, वर वधु के वसन्तोत्सव, अभ्यंगन स्नान आदि साम्प्रदायिक नेत्रोत्सवों के बाद आकाश राजू ने विवाह के लिए आये हुए अतिथियों को स्वादिष्ट भोजनों का प्रबंध किया। उन सब से प्रार्थना की कि विवाह की विधि सानंद संपन्न होने तक और चार दिन यहीं ठहरें। पांचवें दिन नाकबली, वर वधु के कंकण विसर्जन आदि कार्यक्रमों के बाद दोनों को रत्न सिंहासनों पर बिठाकर नूतन वस्त्राभूषणों को आकाश राजू ने समर्पित किया। इस तरह पद्मावती, श्रीनिवास का विवाह महोत्सव दिव्य भव्य रीति से संपन्न होने के बाद सुमङ्गलियों के सांप्रदायिक सुमधुर गीतों के बीच, धरणी देवी तथा आकाश राजू ने पद्मावती को श्रीनिवास के हाथ सानंद सौंप दिया। सर्वाभरणों से अलंकृत ऐरावत जैसे गजराज पर पद्मावती तथा श्रीनिवास आसीन होकर मंगल वाद्यों के साथ उनके अस्थायी आवास के लिए निकल पड़े। आकाश राजू का मन संतृप्त हो गया कि श्रीनिवास के धन की रक्षा कर उन्हें फिर से ठीकठाक खुद सौंप दिया गया है।

26. पद्मावती के साथ छः महीने अगस्त्याश्रम में रहकर श्रीनिवास का वेंकटचल पर पहुँचना

तीन दिन अस्थायी आवास में संप्रदायानुसार ठहरने के बाद, श्रीनिवास ने पद्मावती के साथ गरुडारुढ़ होकर आकाश राजू के पास

चला गया और फिर से वेंकटाचल जाने की अनुमति मांगी। धरणीदेवी पद्मावती को गले लगा कर आनन्दाश्रु बहाने लगी। आकाश राजू ने भी ख़ुशी की आंसुओं को पोंछते हुए पुत्री तथा दामाद को आशीर्वाद दिया। वेंकटाचलपति, तोंडमान दम्पति तथा वसुधान से भी ख़ुशी ख़ुशी मिलकर, बाद में ब्रह्मादि देवताओं के साथ स्वर्ण मुखरी नदी के तट पर स्थित अगस्त्याश्रम के लिए रवाना हो गए। वहाँ पहुँचते ही अगस्त्य महामुनि ने उन सब का सादर आह्मवान किया। उन्होंने श्रीनिवास से कहा कि विवाह के बाद छः महीने तक पर्वतीय प्रांतों पर चढ़ना नव दम्पति के लिए मना है। इस कारण वेंकटेश ने उनके आश्रम के समीप वायव्य दिशा पर नया आश्रम बनाकर निवास करने का निर्णय ले लिया। विवाह के लिए पधारे हुए देवी देवताओं के आदर सत्कार के बाद नव दम्पति ने उनसे विदा ली। वशिष्ठ, शुक तथा महालक्ष्मी भी अपने-अपने आवासों के लिए लौट गए। यहाँ सुवर्ण मुखरी तीर पर पद्मावती श्रीनिवास के छः महीने निवास करने के कारण यह क्षेत्र श्रीनिवास मंगापुरम नाम से विख्यात हो गया। यहाँ का कल्याण वेंकटेश्वर का मंदिर आज भी दर्शनीय स्थल है।

वेंकटाचल के लिए जाने से पहले श्रीनिवास ने पत्नी पद्मावती के साथ श्वसुर आकाश राजू के पास जाकर कहा कि क्योंकि वकुलम्मा अकेली वेंकटाचल पर है, हमें अब वहाँ तुरंत जाना होगा। आकाश राजू ने ससुराल जा रही पुत्री को उपहार के रूप में अनेकानेक वस्त्राभूषण, मधुर खाद्य पदार्थ, विविध प्रकारों के धान, इमली, गुड़, शक्कर, घी, दही के घडे, मिर्च, सरसों आदि रसोई के सामान, विविध तरकारियाँ, कंद मूलादि, अदरक, नीम के फल, अनेक दास दासी जन सहित सप्रेम दिया। वेंकटेश्वर ने तिरुमल पर पुष्करिणी के तीर पर तिंत्रिणी वृक्ष के नीचे स्थित वाल्मीक भवन में

पद्मावती के साथ प्रवेश किया। वकुलम्मा ने आरती उतारकर उनका स्वागत किया तथा पहले दोनों को दूध तथा फल देकर साम्प्रदायिक तरीके से उनका सम्मान किया। आकाश राजू के द्वारा भेजे गए भेंट के भी वहाँ पहुँच जाने के बाद, श्रीनिवास अपनी पत्नी पद्मावती के साथ सानंद रहने लगा।

27. आकाश राजू का स्वर्गवास, तोंडमान तथा वसु नायक के बीच मनमुटावों को दूर कर उन्हें आनंदित करना

श्रीनिवास, पद्मावती का वैवाहिक जीवन सानंद गुजर रहा था। इस बीच एक दिन नारायण पुरम से एक राज पुरोहित समाचार लाया कि आकाश राजू अस्वस्थ हैं। इसे सुनकर पद्मावती बहुत दुःखित हो गयी। श्रीनिवास ने उसे समझाया और वकुलम्मा, पद्मावती तथा पुरोहित के साथ अगस्त्याश्रम गए। वहाँ महर्षि अगस्त्य को भी आकाश राजू की अस्वस्थता के बारे में बताकर, उन्हें भी साथ लेकर नारायण पुरम के लिए रवाना हो गये। पद्मावती पिताजी को देखकर माँ धरणी देवी से लिपटकर रोने लगी। वकुलम्मा उन्हें सांत्वना देकर, पद्मावती को दूसरे कमरे में ले गयी।

अगस्त्य महर्षि ने आकाश राजू के निकट जाकर श्रीनिवास के आगमन के समाचार को सुनाया। लेकिन तेज उच्छवास निश्वास ले रहे आकाश राजू की मूंदी हुई आँखें खुली ही नहीं। इसे देखकर बिलकुल ग्राम्य युवक की तरह, वसु नायक तथा तोंडमान से लिपटकर श्रीनिवास रोने लगे। आस पास खड़े लोग भी अपने राजा की स्थिति को देखकर रोने लगे। आकाश राजू की आँखें खुलीं। सबकी ओर एक बार देखकर अगस्त्य महर्षि को राजू ने बड़े ही प्रयास के साथ नमस्कार किया। अगस्त्य महर्षि ने उन्हें श्रीनिवास को

दिखाया। श्रीनिवास उनके पास गए। आकाश राजू तो बात करने की स्थिति में ही नहीं था। अपने पुत्र तथा भाई को पास आने का इशारा किया। दोनों आ गए तो उन दोनों के दाहिने हाथों को अपने दाहिने हाथ में लेकर, उन्हें श्रीनिवास को सौंपते हुए धीमी आवाज में उन्होंने कहा, 'हे पुरुषोत्तम! देवादिदेव! स्वामी! इनकी रक्षा करो!' इतने में पद्मावती और धरणी देवी भी वहाँ पर आ गयीं। उन दोनों को भी आकाश राजू ने पास आने को कहा। पास आयी हुई पुत्री पद्मावती के सर पर प्यार से हाथ फेरा। धरणी देवी को सहगमन की अनुमति दी। श्रीनिवास, वकुलम्मा तथा अगस्त्य मुनि को देखते हुए कहा, 'हे वैकुण्ठ वासी स्वामी! तव चरणं मम शरणं' कहते हुए शाश्वत निद्रा में आँखें मूँद ली। वहाँ खड़े सबों ने शोक में हाहाकार की। पुरोहित तथा मन्त्रिगण आकाश राजू के अंतिम संस्कार के प्रबंध में जुट गए। वसु नायक अपने चाचा के साथ, पुरोहितों के आज्ञानुसार पिता की अंत्येष्टि में भाग ले रहा था। सब लोग प्रेत कार्य के लिए श्मशान घाट चले जा रहे थे। वहाँ मंत्रादि के बाद आकाश राजू के शरीर को चन्दन की लकड़ियों पर लिटाया गया। अनेकों घड़ों से घी को उनकी चिता पर छिड़का गया। वसुनायक ने दक्षिणाग्नि दिया तो चिता भड़कती हुई जलने लगी। धरणी देवी चिता की तीन बार परिक्रमा कर, अपने पति देव का स्मरण कर, चिता में प्रवेश कर गयी। देखते-देखते स्वर्ग से दिव्य विमान आ गया और आकाश राजू, पत्नी के साथ उस पर चढ़ गये। झट से विमान दोनों को स्वर्ग पहुँचाने उड़ गया। पितृ कार्य के समाप्त होने के बाद सब लोग अपने निवासों के लिए वापस लौट पड़े। इसके बाद होने वाले अन्य पैतृक कार्यों को वसु नायक, वशिष्टादि महर्षियों, पुरोहितों, बंधु मित्रों के साथ मिलकर किया। तदनन्तर महर्षियों, वेद पंडितों, पुरोहितों को दानादिक कर, गरीबों

को अन्नदान का भी प्रबंध किया गया। इस तरह आकाश राजू के निधन के बाद होने वाले सभी कार्यक्रमों की समाप्ति के बाद श्रीनिवास भी पद्मावती तथा वकुलम्मा के साथ अपने स्थान वापस पहुँच गये। वशिष्टादि ऋषि गण, बंधू जन भी वहाँ से अपने-अपने घरों के लिए निकल पड़े।

इस तरह कुछ दिन बीत गए। तोंडमान तो इतने सारे दिन, अपने पिताजी के निर्णयानुसार अग्रज आकाश राजू से बाँटे गए राज्य का पालन करता रहा। लेकिन अब तो आकाश राजू नहीं रहे। उनके निधन के बाद, तोंडमान ने जायदाद में अधिक हिस्से को पाना चाहा। इस कारण परिवार में मन मुटाव पैदा होने लगे। दोनों ने श्रीनिवास जी के पास जाकर, इस समस्या को सुलझाने की प्रार्थना की। पद्मावती ने भी श्रीनिवास से कहा कि आप इस तरह निर्णय लीजिये कि चाचा से, भविष्य में, भाई को जायदाद से सम्बन्धित कोई समस्या पैदा न हो। इसके बहुत पहले ही अगस्त्य महर्षि ने तोंडमान की राज्य कांक्षा को पहचाना था और सोचा था कि इन दोनों के इस समस्या के लिए समझौता ही अच्छा मार्ग है। उन्होंने यह भी कहा था कि श्रीनिवास जी ही इस समस्या को सुलझा सकेंगे।

श्रीनिवास ने दोनों से अलग-अलग समावेशों में बातचीत की। तदनन्तर उन्हीं से पूछा कि आप किस तरह का सुझाव चाहते हो? उन दोनों ने कहा कि आपका निर्णय हमारे लिए शिरोधार्य है।

श्रीनिवास ने अगस्त्य महर्षि को बुलाया और उनके सामने समझौते के नियमों को बताया कि तोंडमान, तोंडमनाडू राज्य का और वसु नायक आकाश राजू के नारायण पुरम का पालन पूर्ववत करेंगे। उन उनके परिवारों के लिए भी यही नियम लागू रहेगा।

तोंडमान इतने सारे दिन, आकाश राजू के साथ रहकर जिस निधि को दोनों के लिए इकट्ठा किया, उसे सही रूप से अब तोंडमान तथा वसु नायक को बाँटना चाहिए। धनागार में जो चांदी, सोना, अमूल्य रत्न हैं, इनको भी दोनों के बीच बाँटना होगा। रथ, गज, तुरग पदादि सेना को भी उनकी बुद्धि तथा शौर्य के आधार पर समान रूप से दोनों को लेना चाहिए। दास दासी जनों को अपने इच्छानुसार दोनों लें।

लेकिन रसोई घर से सम्बन्धित वस्तुओं को उम्र में छोटा होने के कारण पहले वसु नायक का चुन लेना उचित होगा। अगस्त्य ने भी इसे ही उचित और धर्म कहा। वसु नायक ने कहा कि पिता समान चाचा को ही सम्पदा को चुनने का अधिकार पहले दिया जाय क्योंकि अधिकतर समय पिता के साथ उन्होंने राज्य को सँभालने में बिताया। उम्र में छोटा होते हुए भी वसु नायक को इस तरह कहते देखकर अगस्त्य महर्षि बहुत ही आनंदित हुए।

तब तोंडमान ने राज्य छोड़कर, बाकी जायदाद को पश्चिम तथा पूरब दिशाओं के संकेत से दो भागों में बांटकर उन्हें एक तथा दो भागों में संकेतित किया और दोनों के सांकेतिक अंकों में पर्चियों पर लिखा। उन दोनों पर्चियों को पद्मावती के हाथों में देकर कहा कि अपनी इच्छानुसार इन पर्चियों को वसु नायक तथा स्वयं को दें। इसे देखकर उनकी धार्मिकता को सराहते हुए श्रीनिवास मुस्कुराने लगे। पद्मावती अपने हाथ में रखी गई पर्चियों को खूब मिलाकर, उनमें से एक को वसु नायक के हाथों तथा दूसरी पर्ची को चाचा के हाथों रखा। अगस्त्य ने उन्हें खोलकर देखा और कहा, 'मैंने धर्म की देवी बनकर जायदाद को सही तरह बांटा।' श्रीनिवास ने भी इस बंटवारे

को सराहा। तोंडमान तथा वसु नायक - दोनों ने श्रीनिवास तथा अगस्त्य को अपनी सम्मति बताते हुए साष्टांग दंड प्रणाम किया। उन दिनों के आचार व्यवहार के अनुसार पद्मावती को सोलह देहातों को उपहार के रूप में दोनों ने दिया। इस तरह तोंडमान तथा वसुनायक के रिश्तों के बीच आनंद फिर से समा गया।

श्रीनिवास ने पहले तोंडमान को ही राज्याभिषिक्त किया। उसके बाद ही वसु नायक को सिंघासन पर बिठाया। दोनों के पास कुछ दिन, पद्मावती तथा वकुलम्मा के साथ रहकर पुनः एक शुभ वेला में वेंकटाचल वापस चला गया।

तोंडमान अपने तोंडमनाडु में प्रजा के अनुकूल राज करता रहा। अपनी प्रजा की इच्छा के अनुसार श्री वेंकटेश्वर के मंदिर का भी निर्माण उसने किया।

उधर नारायण पुरम में वसु नायक भी प्रजा की आवश्यकताओं के अनुसार राज करता रहा। प्रजा भी राजा के प्रति विश्वास तथा भक्ति से रहने लगी।

28. तोंडमान का पद्मावती को देखने वेंकटाचल जाना

कुछ दिन बाद तोंडमान राजा, पद्मावती को देखने की इच्छा से वेंकटाचल गया। श्रीनिवास ने उसका आदरपूर्वक स्वागत किया। भोजन के बाद उसे अपने पास बिठाकर श्रीनिवास ने कुशल मंगल पूछा तो तोंडमान ने कहा, 'हे लोकेश्वर! भगवान के रूप में सकल लोक की प्रजा आपकी प्रस्तुति करती है। मुझे भी लगा कि आपकी स्तुति सत्य संगत ही है। इसीलिए आपके भव्य दर्शन की इच्छा से ही मैं आया हूँ।' श्रीनिवास भी उसकी भक्ति को देखकर खुश हुआ और

कहा, 'हे तोंडमान! तुम्हारे अग्रज ने मुझसे पद्मावती की शादी रचाकर मुझे धन्य किया। अब तुम भी मेरा एक काम कर मेरी कृपा के पात्र बनो।'

'हे स्वामी! आपकी आज्ञा का भक्ति तथा श्रद्धा से पालन करूँगा। मुझे मालूम है कि सब कुछ आपकी अनुकम्पा का ही फल है।'

'हाँ, मुझे विश्वास है कि तुम यह कार्य अवश्य कर दोगे। अगर यह काम तुम्हारे द्वारा हो जाय, तो तब मैं सही में एक घर का मालिक भी बन जाऊँगा। फिलहाल मेरे लिए कोई निवास स्थान ही नहीं है। इस इमली के पेड़ के नीचे वल्मीक में वास कर रहा हूँ। अब मेरे लिए एक निवास की आवश्यकता है।'

'हे स्वामी! कृपया आप सर्वप्रथम, जगह का निर्णय कीजिये और मैं काम का श्रीगणेश कर दूँगा।'

'बहुत अच्छा! तो चलो अभी निकलते हैं।' श्रीनिवास, पद्मावती, वकुलम्मा को लेकर तोंडमान के साथ निकल पड़े। पहले वराह स्वामी जी से मिले और अपनी मनोकामना प्रकट की। वराह स्वामी ने कहा, 'मेरे मंदिर की दक्षिण दिशा में, पुष्करिणी के तीर पर अपना निवास बनाओ! बहुत अच्छा होगा!' श्रीनिवास ने इन बातों से खुश होकर तोंडमान से कहा, 'यहाँ, पूरब दिशाभिमुख मंदिर का निर्माण करो। उसमें दो गोपुर होंगे। तीन परिक्रमाएँ होंगी। सप्त द्वार तथा ध्वज स्तम्भ भी होंगे। आस्थान मंडप, याग शाला, गोशाला भी हों। धान्यागार, अन्य सामग्री के लिए कमरे, मालागृह, कपूर आदि सुगंध द्रव्यों को रखने के प्रबंध, आग्नेय दिशा में सभी सुविधाओं के साथ एक अच्छा सा रसोई घर, जल व्यवस्था के लिए कुआँ भी हो। मंदिर के तथा

अंत:पुर के दरवाजे सभी ताम्र की पट्टियों से बनकर, स्वर्ण जल की पुताई से हों। मेरे ठीक सामने स्वर्ण द्वार हो। मेरे वाहन गरुड़ के लिए अलग-सा कमरा होना चाहिए।'

'हे स्वामी! सब कुछ आपकी दया पर आधारित है। मैं तो मात्र एक सेवक हूँ। लेकिन स्वामी! मुझे कृपया बताएँ कि पिछले जन्म में मैं कब और कैसे आपकी दया के योग्य बना?' इस वृत्तांत को श्रीनिवास ने निम्नवत बताया।

29. रंगदास का वृत्तांत

पुराने ज़माने में, मैं यहाँ के वल्मीक में तपस्या में मग्न था। उसी समय, वैखानस नामक एक मुनि, कृष्णावतार की गाथा पर मोहित होकर, द्वापर युग की मेरी छवि के दर्शन की वांछा लिए तीव्र तपस्या करने लगा। ब्रह्मा ने उसकी तपस्या पर खुश होकर उसके सामने प्रत्यक्ष होकर कहा, 'हे भक्त! अब तो कलियुग है। इस युग में फिर से श्री कृष्ण के अवतार में भगवान को देखने की इच्छा रखना असंगत है। अब तो वे श्री वेंकटाचलपति के रूप में धरा पर हैं। तुम वेंकटाचल चले जाओ। स्वामी पुष्करिणी के तीर पर इमली के पेड़ के नीचे जो बाँबी है, उसमें स्थित वेंकटाचलपति को पूजो! वेंकटाचल के रास्ते में रंगदासु नामक भक्त तुझे मिलेगा। वह तुम्हारा साथ देगा। वेंकटाचलपति तुम्हारी पूजा से संतुष्ट हो जाएंगे। तुम्हें भी उनके दर्शन से अतीव आनंद मिलेगा।' ब्रह्मा के इन वचनों का पालन करने वह वैखानस भक्त वेंकटाचल के लिए निकल पड़ा। मार्ग में रंगदास से भेंट भी हुई। दोनों मिलकर वेंकटाचल पर आ गए। स्वामी पुष्करिणी के पास इमली के पेड़ के पास जो वल्मीक है, उसके अंदर तपस्या में मग्न एक दिव्य पुरुष को उसने देखा और पहचाना कि यही

वेंकटाचलपति है।' उस दिव्य पुरुष को दंड प्रणाम किया और रंगदासु को भी इस कहानी को सुनाया। रंगदासु हर दिन उस स्वामी की पूजा के लिए फल पुष्पादि जंगल से लाया करता था और वैखानस मुनि मेरी पूजा अर्चना करता था।

रंगदासु ने पूजा के लिए आवश्यक सुमनों के लिए एक उपवन का प्रबंध कर, उसमें पानी के लिए कुएँ का निर्माण भी किया। वह बगीचा विविध सुगंध भरित कभी भी न मुरझाने वाले फूलों से भरा था।

एक दिन एक गन्धर्व, अपनी पत्नी के साथ वहाँ की पुष्करिणी में नहा रहा था। इतने में रंगदासु, सुमन चयन के लिए वहाँ पर आ गया। उस गन्धर्व दम्पति के लीला विनोद को देखते-देखते वह अपना काम भूल गया। उधर पूजा के लिए फूल न मिलने पर वैखानस भक्त बहुत ही कुपित हो चिल्ला रहा था। रंगदासु अपनी भूल को पहचानकर, झट फूल लेकर वहाँ पहुँचा और वैखानस मुनि के कोपावेश को देखकर भयभीत हो गया। मन ही मन मुझसे प्रार्थना की कि उसे क्षमा करें। मुझे भी उस पर तरस आ गयी। बिल में से ही उसे सांत्वना देकर मैंने कहा कि यह सब मेरी माया ही है। पश्चात्ताप से बढ़कर दण्ड नहीं है। इसी पुष्करिणी तीर पर तुम्हारी मृत्यु होगी। अगले जन्म में चोल राजा के पुत्र बनोगे। उन कुंदरू के पौधों के सम्बन्ध के कारण तुम इस जन्म में रंगदासु बनकर मेरे पास आये हो। हे तोंडमान! इस जन्म में वह रंगदासु ही तुम हो! रंगदासु के रूप में तुमने मेरी पूजा के सुमनों के लिए उपवन तथा कुआँ बनाया। इसलिए मेरे लिए अब भी तुम अत्यंत प्रीति पात्र हो।'' श्रीनिवास की इन बातों को सुनकर, तोंडमान, अश्रु पूरित नयनों से स्वामी के चरणों पर गिर

गया। कुछ देर बाद खूब प्रयत्न कर अपने को संभालकर कहा,' हे दयालु स्वामी! आपकी कृपा मुझ पर बनी रहे। आपके इच्छानुसार भव्य मंदिर का निर्माण कर आपको आनंदित करूँगा अवश्य बहुत जल्दी!' बाद में वह पद्मावती तथा श्रीनिवास से अनुमति लेकर वापस तोंडमनाडु चला गया।

उधर वैखानस मुनि की पूजा से संतुष्ट होकर वेंकटाचलपति ने उसके सामने प्रत्यक्ष हो कहा, 'हे मुनि! मैं आपकी पूजा से बहुत खुश हुआ। आपकी पूजा विधि से भी मुझे प्यार हो गया है। आगे मेरी यहाँ की पूजा भी वैखानस परंपरा के अनुसार ही होगी।' आज भी तिरुमल पर वैखानस पूजा विधि का अनुसरण हो रहा है।

रंगदासु का कुआँ, मंदिर के ध्वज स्तम्भ की उत्तर दिशा में रसोई घर के सामने अभी भी स्थित है।

30. श्रीनिवास के आज्ञानुसार तोंडमान द्वारा मंदिर का निर्माण

वहाँ तोंडमान ने वास्तु के पंडितों को बुलाकर श्रीनिवास की इच्छा के अनुसार मंदिर का निर्माण करने हेतु, एक नमूने को बनाने की आज्ञा दी। नमूने के बनने के बाद, उसे पुरोहित के द्वारा श्रीनिवास को उसने भेजा। श्रीनिवास की अनुमति मिली। तदनन्तर तोंडमान ने शिल्पाचार्यों को बुलाया और नमूने के अनुसार तिरुमल पर मंदिर का निर्माण करने की आज्ञा दी। वे सभी शिल्पाचार्य अपने शिष्यों और कारीगरों को बुलाकर मंदिर के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री का प्रबंध करने में जुट गए। एक शुभ मुहूर्त पर मंदिर के निर्माण का शिलान्यास भी हो गया। विविध कारीगर अपनी-अपनी कुशलता के अनुसार काम करने लगे। बड़े-बड़े चट्टानों से स्तम्भ, दीवार, द्वारबंध

आदि बनते गए। दूसरी तरफ शिल्प कला के चमत्कार आविष्कृत हो रहे थे। ईशान्य दिशा की तरफ के निर्माण की प्रगति का निरीक्षण करता था। कारीगरों की प्रशंसा करता था और आवश्यक सूचनाएँ भी देता था। श्रीनिवास भी कभी कभार मंदिर के निर्माण पर दृष्टि डालते रहे। फलतः मंदिर का निर्माण स्वामी की मनोवांछा के अनुसार ही होने लगा। वैनतेय विभूषित, सुवर्ण कलश युक्त होकर विविध सुन्दर प्रतिमाओं से मंदिर सुशोभित था। रसोई घर के निर्माण में वकुलम्मा का योगदान बढ़िया था। उसमें वकुलम्मा की प्रतिमा अभी भी है। गर्भालय के चारों तरफ वैकुण्ठ द्वार का निर्माण हुआ। गर्भालय के ऊपरी भाग पर स्थित विमान पर स्वर्ण कलशों की स्थापना हुई। स्वर्ण विमान तथा स्वर्ण द्वार भी बन गए।

पहाड़ पर चढ़कर भक्त जन, स्वामी की सेवा में आ पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ, विश्राम करने के लिए मंडप, शेषाचल के ऊपर दिव्य गोपुर का निर्माण भी हो गया। एक शुभ अवसर पर तोंडमान ने श्रीनिवास के यहाँ आकर मुकुलित हस्तों से कहा, 'हे श्रीनिवास! लीजिये, आपके सेवक ने आपकी आज्ञा की पूर्ति की है,' श्रीनिवास ने भी सानंद तोंडमान को गले लगाकर कहा, 'हे राजा! तुम तो मेरे प्रिय बंधुजनों में से एक हो। अब से तुम और भी करीब के रिश्तेदार हो गए हो। तुम्हें मेरी बधाई।' तोंडमान भी भावुक होकर अश्रु पूर्ण नयनों से प्रणाम किया। यही ब्रह्मानंद है न? तोंडमान को देखने से लग रहा था कि 'आनन्दो ब्रह्म' वाली वैदिक सूक्ति का अर्थ उसे अनुभव में आ गया है।

गृह प्रवेश के लिए मुहूर्त निकालने के लिए श्रीनिवास ने बृहस्पति को बुलावा भेजा। देव गुरु ने तिथि, वार, नक्षत्र, योग,

करणादि के साथ तारा बल, चंद्र बल, वृषभ कलश चक्र शुद्धि के अनुसार सारे ग्रहों की सर्वोच्च स्थिति में सर्वोच्च मुहूर्त का निर्णय किया। अब मंदिर में प्रवेश से सम्बन्धित उत्सव पर पधारने के लिए इन्द्रादि दिक् पालकों, ब्रहादि देवताओं, महर्षियों, योगियों तथा सर्व भक्त समूहों को आह्वान भेजे गए। ब्रह्मा इस भव्य महोत्सव के लिए सभी प्रबंध करने में जुट गए। वेंकटाचल तो भूलोक वैकुण्ठ जैसे दिखाई देने लगा। लेकिन वैकुण्ठ पति का मुँह कुछ मुरझाया हुआ-सा था। देवेंद्र ने उनसे कहा, 'हे स्वामी! मुझे लग रहा है कि आप बुझे से हो। कृपया मुझे कारण बताएँ ताकि मैं इसे सुलझा सकूँ।' श्रीनिवास ने आहें भरते हुए कहा, 'इस आनंद समय में लक्ष्मी देवी की अनुपस्थिति दिल में चुभ रही है।' इसे सुनते ही देवेंद्र ने तुरंत कहा, 'अगर विषय यही है तो आपकी आज्ञा से इसे सुलझाने का यत्न आपका यह सेवक अवश्य करेगा।' श्रीनिवास ने उसे अनुमति दे दी।

'जो आज्ञा! अभी मैं जगज्जननी को ले आऊँगा।' कहते हुए इंद्र अपने रथ सारथी मातुल को बुलाया और रथ पर चढ़कर कोल्हापुर चला गया। वहाँ लक्ष्मी देवी से मिलकर, मंदिर के शुभारम्भ के समाचार को बता कर उन्हें आह्वानित किया। लक्ष्मी देवी भी सानंद पुष्पक विमान पर चढ़कर वेंकटाद्रि पहुँची। श्रीनिवास के चरण कमलों की वंदना करती पत्नी को देखकर श्रीनिवास ने भी बहुत आनंदित होकर लक्ष्मी देवी को ह्रदय से लगाया। वकुलम्मा भी लक्ष्मी देवी को देखकर बहुत खुश हो गयी। पत्नी के साथ मिलकर श्रीनिवास की मुख कांति दुगनी हो गयी।

शुभ मुहूर्त की बेला में अद्भुत रीति से उसे अलंकृत किया गया। केले के पेड़ के स्तम्भों और आम के पत्तों से उसकी सुंदरता चौगुनी हो गयी। विविध परिमल भरित पुष्प मालाओं तथा मणिमय दीप वृक्षों से मंदिर के परिसर परिमल भरित तथा कांतिमय हो गए।

श्रीनिवास, लक्ष्मी देवी, पद्मावती, वकुलम्मा - सभी ने मंगल स्नान कर, दिव्य पीताम्बरों को धारण किया। नव रत्नों से जड़ित आभूषणों को पहना। श्रीनिवास, शुभ कलश को हाथों में धरकर आगे बढ़ रहा था तथा लक्ष्मी देवी और पद्मावती उसका पीछा कर रही थीं। तोंडमान तथा वसु नायक के परिवार, इन्द्र, बृहस्पति देवता लोग, महर्षि वृन्द भी निकल पड़े। सबसे आगे वेद मंत्रोच्चारण करते बृहस्पति वशिष्टादि चल रहे थे। मंगल वाद्यों का सुमधुर नाद गूंज रहा था। शुभ मुहूर्त की वेला में श्रीनिवास ने गोपूजा की तथा आलय में प्रवेश किया। शास्त्र के अनुसार गृह प्रवेश भव्य रीति में संपन्न हुआ। आनंदमय उस निवास को देखकर देवी देवताओं ने सराहा और कहा, 'हाँ, यह सब में आनंद निलय ही है।' दिव्य स्वर्ण विमान के पास, लक्ष्मी देवी तथा पद्मावती को अपने हृदयतल के दोनों तरफ धरकर श्रीनिवास ने कहा, 'इस कलियुग के अंत तक, अर्चावतार के रूप में, मैं आप सबको दर्शन देते हुए यहीं निवास करूँगा।' उनके सन्देश से खुश होकर सब लोग आनंद तांडव करने लगे। भोजनादिक के बाद वे सभी अपने-अपने स्थानों पर चल दिए। श्रीनिवास की अनुमति से ब्रह्मा ने घोषणा की कि हर साल यहाँ ये उत्सव इसी तरह मनाये जाएँगे।' इसी वक्तव्य के अनुसार आज भी तिरुमल पर ये उत्सव मनाये जा रहे हैं।

यह तो जनमत है कि तब से लेकर आज तक श्रीनिवास, अपनी दोनों पत्नियों के साथ अर्चामूर्ति के रूप में वहाँ ठहरकर, भक्तों की मनोवांछाओं की पूर्ति करते हुए कलियुग की बाधाओं का निदान कर रहे हैं।

वेंकटाचल का आनंद निलय ही वैकुण्ठ है। उस वैकुण्ठ के दर्शनार्थ भक्त जन, लाखों संख्या में भगवान श्री वेंकटेश के पावन दर्शन से पुनीत होकर अपनी मनोकामनाओं को प्राप्त कर रहे है।

31. कूर्म तथा भीम के वृत्तांत

श्री वेंकटेश्वर के अर्चा मूर्ति के रूप में आनंद निलय में वास करते समय, दक्षिण देश में कूर्म नामक भक्त रहता था जो अपने पिता की निरंतर सेवा में तत्पर था। उसके पिताजी का निधन होने के कारण, उनकी अस्थियों को लेकर गंगा में छोड़ने के लिए वह अपने प्रदेश से निकल पड़ा। इस बीच उसे तोंडमान के बारे में मालूम हुआ। तोंडमान को देखने के लिए वह वहाँ पहुँचा। तोंडमान के दर्शन के लिए जाते समय, अपनी पत्नी तथा बेटे को उसी जगह पर छोड़कर सिर्फ आप चल पड़ा। उस समय राजा राज सभा में पंडितों के बीच बैठकर शास्त्र चर्चाएँ सुन रहा था। उन चर्चाओं का अंतिम निर्णय यही था कि परोपकार का ज्ञान ही फलरहित परोपदेश ज्ञान से उत्तम है। चर्चा के बाद, राजा ने पंडितों का उचित रीति में सत्कार कर अपने भवन में जा रहा था कि कूर्म, राजा के सामने पहुँचकर वेदोक्त रीति में उसे आशीर्वाद दिया। राजा ने कूर्म के कुशल मंगल की पूछताछ कर कहा कि आपके आगमन का कारण क्या है?' कूर्म ने कहा, 'हे राजन! आपके बारे में सुनकर आपके दर्शन के लिए आया हूँ। फिलहाल मैं अपने पिताजी के निधन के कारण, श्राद्ध कार्यों के लिए

गंगा जा रहा हूँ। मेरी गर्भवती पत्नी तथा मेरा पाँच वर्षीय पुत्र चल नहीं पा रहे हैं। मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि मेरे गंगा हो आने तक कृपया आप इन दोनों की रक्षा करें।' राजा ने सानंद स्वीकारा और कहा, 'आप निश्चिंत हो कर जाइये। आपकी पत्नी और बेटे को हमारे रानीवास में छोड़ जाइये। आपके लौट आने तक मैं उन दोनों की देखभाल अवश्य करूँगा।'

कूर्म चला गया। तोंडमान ने उसकी पत्नी और बेटे को एक सुरक्षित प्रांत में रखा। खाने पीने के सभी प्रबंध किए। कड़ी निगरानी में उस प्रांत को रखकर, फिर से अपने कामों में व्यस्त हो गया। कूर्म की पत्नी तथा पुत्र निश्चिंत हो वहाँ निवास कर रहे थे। इस बीच छः महीने हो गए। राजा उन दोनों के बारे में सम्पूर्णतया भूल-सा गया।

देखते-देखते एक साल बीत गया। कूर्म ने अपनी यात्राओं के बाद फिर से तोंडमान राजा के पास आकर अपनी गर्भवती धर्म पत्नी और पुत्र के बारे में पूछा। तब जाकर तोंडमान को उसके परिवार के बारे में स्मरण हो आया। उसने झट कह दिया कि हे कूर्म! तुम्हारी पत्नी ने बेटी को जन्म दिया और वे सब मेरे पास ठीक ठाक हैं। फिलहाल वे तीनों मेरे परिवार के साथ वेंकटाचल गए हैं। कल या परसों वापस आ जायेंगे। उनके आने के बाद मैं तुम्हें खबर भेजूँगा। तब तक आप यहाँ हमारे यहाँ रुकिए। आपके भोजन का प्रबंध हम कर देंगें।'

कूर्म के चले जाने के पाद तोंडमान ने अपने पुत्र को बुलाकर, कूर्म की पत्नी व पुत्र को लिवा लाने को कहा। राज कुमार ने वहाँ जाकर कूर्म की पत्नी व पुत्र की अस्थियों को देखा और वापस

आकर तोंडमान को बताया। तोंडमान इसे सुनकर भयभीत हो, वेंकटाचल भाग गया और श्रीनिवास के चरण तल पर गिरकर रोने लगा। वेंकटाचलपति ने सब कहानी सुनकर कहा, 'हे राजन! यह तुमने क्या किया? आखिर तुम्हारा विवेक कहाँ चला गया? जिन्हें तुमने आश्रय दिया, उन्हें ही अनाथ बना दिया। तुम से बढ़कर क्रूर कर्मी कहीं भी नहीं होगा। तुम्हारे अहंकार के क्या कहने? तुम तो मेरे परम भक्त हो। लेकिन तुम्हारी गलती तो अवश्य निंदनीय है। तुम्हारे अग्रज ने मेरा उपकार किया है। तुमने मेरे मंदिर का निर्माण किया। आप दोनों मेरे प्राण समान बंधू हो। आप दोनों पर मुझे असीम प्यार है। इसी कारण मैं कूर्म के परिवार को फिर से जीवित कर दूँगा। इस कलियुग में मुझे ख्याति मिले कि महा क्रूर कर्मियों के पापों को भी मेरी भक्ति मिटा देगी। हे राजन! अपने पुत्र से कहो जाकर कूर्म की पत्नी व पुत्र की अस्थियों को मेरे पास लाए।' तोंडमान ने तुरंत अपने पुत्र को भेजा तो उसने जाकर उनकी अस्थियों को पालकी में वेंकटाचल भेजा। झट श्रीनिवास, उन अस्थियों की गठरी के साथ स्वामी पुष्करिणी के पास पांडव तीर्थ पर पहुँचा। उस गठरी को किनारे पर स्थित एक चट्टान पर रखकर, स्वयं, उस झरने में कंठ तक के पानी में खड़ा हो गया। मंत्रोच्चारण के साथ उन अस्थियों पर पांडव तीर्थ के पानी को छिड़का। आश्चर्य! कूर्म की पत्नी व पुत्र दोनों उठ खड़े हो गए। आकाश से फूलों की वर्षा हुई। तब से पांडव तीर्थ 'अस्थि तीर्थ' नाम से प्रसिद्ध हुआ। देवी देवताओं ने इस तीर्थ की खूब प्रशंसा की।

तदनन्तर श्रीनिवास ने तोंडमान से कहा, 'हे राजन! मैंने आवश्यकतानुसार तुम्हारी सहायता की। आज से मैं अर्चावतार के रूप में इस कलयुग के अंत तक यहीं ठहरूँगा। अन्य वाणी से बात

करते हुए मेरे भक्तों की रक्षा करता रहूँगा। तुम इन्हें ले जाओ और कूर्म को सौंप दो।'

तोंडमान ने श्रीनिवास के आज्ञानुसार कूर्म को उसकी पत्नी और पुत्र को सौंपा। कूर्म बहुत खुश हुआ और राजा के सामने ही पत्नी से पूछा, 'तुम लोग इतने दिन कैसे रहे?' तो उसने जवाब दिया कि 'देव माया के कारण भगवान वेंकटाचलपति की कृपा से उनके उदर भाग में से अनेकानेक लोकों, नदी नदों, सप्त सागरों, कुल पर्वतों, महान अरण्यों को हमने देखा।' कूर्म ने अपनी पत्नी को धन्य कहा। तोंडमान ने भी श्री वेङ्कटेश की खूब स्तुति कर, पुनः अपने राज्य के लिए प्रस्थान किया।

32. तोंडमान की मोक्ष प्राप्ति

उधर तोंडमान राजा तो श्रीनिवास की दयालुता पर खुश था लेकिन अपनी गलती के कारण उनके कोपावेश का पात्र होने का दुःख मन ही मन उसे कोस रहा था। उसे लगा कि फिर से श्रीनिवास की संपूर्ण दया को कैसे पाए?' उसी क्षण उसने अंगीरस आदि महर्षियों को बुलाकर कर्तव्य बोध करने को कहा। उन्होंने कहा कि महा विष्णु को अत्यंत प्रिय तुलसी से हर दिन सहस्र नामार्चन करें तो वे प्रसन्न होंगे। तोंडमान ने उसी क्षण से वैखानस मुनियों द्वारा श्री वेंकटेश्वर की स्वर्णिम तुलसी दलों से सहस्र नामार्चना हर दिन करने लगा। लेकिन श्री वेंकटेश्वर की दया उसे नहीं मिली। इस कारण एक दिन तोंडमान ने श्रीनिवास से कहा, 'हे स्वामी! मेरी गलतियों को माफ़ कर दो। देवताओं में परम दयालु आप ही हो। मुझ भक्त पर तरस खाओ।' तुरंत आकाशवाणी सुनाई दी, 'मेरे तो अनगिनत भक्त हैं। लेकिन तुम्हारे जैसा पाप कर्मी कोई एक भी नहीं है। तुम्हारा पाप

तुम्हें छोड़ेगा नहीं। आकाश राजू के प्रति मैं अभी भी कृतज्ञ हूँ। इस कारण मैं ने उन्हें पुनः जीवित किया। नहीं तो...' तोंडमान से रहा नहीं गया और बीच में ही कहा,' हे श्रीनिवास! चाहे कितना ही बड़ा हो, अपने द्वारा किये गए परोपकार को कोई भी कभी भी प्रकट नहीं करता है। तीनों लोकों में मेरे जैसा भक्त तुम्हें नहीं मिलेगा। यह मत भूलो। भक्तों पर दया बरसाने में तुम जैसे देवता भी कोई नहीं हैं।' घमंड की भी हद होती है न? लेकिन तोंडमान ने स्वर्ण तुलसी अर्चना को जारी रखा।

श्रीनिवास ने भी तोंडमान की अहम् को मिटाना चाहा। एक दिन तोंडमान, तोंडमनाडु में अपने द्वारा निर्मित श्री वेंकटेश्वर के देवालय में स्वर्ण तुलसी दलों से अर्चना कर रहा था। उसने अचानक उन अमूल्य तुलसी दलों के बीच एक मृण्मय तुलसी दल को देखा। तोंडमान को लगा कि श्री वेंकटेश का उसके प्रति क्रोध नहीं मिटा। दिल ही में वह पछताने लगा। श्री वेंकटेश्वर की मूर्ति के सामने खड़े होकर उसने कहा, 'हे त्रिलोक वासी स्वामी!! हे वैकुण्ठ नाथ! हे वेंकटाचलपति! भक्तों की रक्षा करनेवाले स्वामी!! आपके ही चरणों पर मुझे प्रश्रय मिलेगा। अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम!! अपने भक्त का इतना निरादर तुम्हें शोभा नहीं देता इन मृण्मय तुलसी दलों से आपकी पूजा करने वाले भक्त का नाम मुझे कृपया बताएँ।' तोंडमान की बातों को सुनकर श्रीनिवास ने अदृश्य रूप में कहा, 'हे राजन! तुम इतने दिनों से मुझे जानते हो। लेकिन मुझे पहचान नहीं रहे हो। राग द्वेषों से अतीत व्यक्ति ही मुझे अत्यंत प्रिय होता है। चाहे वह राजा हो, महाराजा हो, भिक्षुक हो, कोई भी हो! सकल प्राणियों के प्रति समता की भावना रखकर, मनो वाक्काय कर्मों से कोई भी

गलती न करते हुए अधिक सम्पदा के पीछे न पड़ते हुए मात्र मेरी सेवा में हमेशा तत्पर भक्त ही मुझे अत्यंत प्यारा है। उनके द्वारा समर्पित छोटी-सी चीज भी मेरे लिए प्रीतिपात्र है। ऐसे कई भक्त हैं।

उनमें से एक तोंडमनाडु की उत्तर दिशा के एक देहात में रहता है और उसका नाम भीम है। उसकी पत्नी का नाम है तमालिनी। इन दोनों को कोई ऐश्वर्य की कांक्षा ही नहीं है। अपनी मेहनत पर मिली कमाई से जो दलिया मात्र मिले तो उसीसे पेट भर लेते हैं। मिट्टी से कलाकृतियों को बनाने की कला में यह भीम अत्यंत निपुण है। इसी कारण मिट्टी से तुलसी दलों को बनाकर उन्हीं से मेरी पूजा करता रहता है। तुमने देखा कि उसके द्वारा समर्पित ये दल मुझे अत्यंत प्रिय भी हैं।' श्रीनिवास की इन बातों से तोंडमान अभिभूत हो गया और तुरंत भीम से मिलना चाहा। राजोचित वाहनों को भी त्यागकर वह पैदल ही भीम से मिलने निकल पड़ा। आखिर उन देहाती गलियों में से गुजरते-गुजरते एक गन्दी-सी बस्ती में स्थित भीम के घर पहुँचा। लेकिन वहाँ जाते ही तोंडमान बेहोश हो नीचे गिर पड़ा। भीम उसे देखकर दौड़कर आया। घबराते हुए पत्नी को पानी ले आने के लिए कहा। पानी से तोंडमान का मुँह धोया और पानी भी पिलाया। थोड़ी देर बाद तोंडमान होश में आया। सामने भीम को देखकर उसीसे पूछा, 'भैय्या! यहाँ भीम कौन है और कहाँ रहता है?' इतने में वेंकटाचलपति उन दोनों के सामने प्रत्यक्ष हो गए।

तब भीम ने आनंद विभोर होकर कहा, 'हे स्वामी!! श्रीनिवास! तुम्हें मेरा नमस्कार! तुम्हें चढ़ाने के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं है। गजेंद्र की तरह मैं भी एक अनपढ़ मूढ़ भक्त हूँ... मुझे मालूम नहीं कि मेरी भक्ति आपको कैसे भायी?' इतने में उसकी पत्नी तमालिनी

भी वहाँ पहुँची। श्रीनिवास को साष्टांग दंड प्रणाम समर्पित कर उसने भगवान की स्तुति की, 'हे गोविन्द! भक्त वत्सल! अनाथनाथ! वैकुंठवासी प्रभु! आपकी करुणा असीम है। आपकी पूजा विधि के बारे में हम कुछ नहीं जानते हैं। लेकिन तन मन से आपका स्मरण करते रहते हैं। हमारी इस अत्यल्प पूजा से ही खुश होकर हमारे सामने आप प्रत्यक्ष हो गए हो!!! आज हमारे घर का खाना भी स्वीकारो प्रभु! हमें धन्य बनाओ!! यह हमारी नम्र प्रार्थना है।' स्मित वदन से श्री वेंकटाचलपति ने कहा, 'माई! तमालिनी! आपके घर का खाना मेरे लिए अमृत समान है। आज मैं यहीं खाना खाऊँगा।' वचनानुसार श्री वेंकटेश ने तमालिनी के हाथों बने आहार को खाया और अपनी भक्त वत्सलता का उदाहरण भक्त वृंदों को दे दिया। आकाश से देवी देवताओं ने सुमनों की वर्षा की। मंगल नादों के बीच आकाश से एक दिव्य विमान आकर उनके सामने ठहरा। श्रीनिवास ने अपने अमूल्य आभूषण और दिव्य वस्त्रों को दम्पति को दिये। उनकी दोनों पत्नियों ने तमालिनी का श्रृंगार किया। भीम दम्पति ने श्रीनिवास को नमन किया और दिव्य विमान उन दोनों के साथ वैकुण्ठ के लिए प्रस्थान किया।

तोंडमान जो यह सब देख रहा था अब होश में आया और अपनी गलती को मानते हुए अहम् को भी छोड़कर भगवान के चरण कमलों पर गिर गया और कहा, 'हे माधव! सर्वेश्वर स्वामी!! इतने सारे दिन मैं सोच रहा था कि मेरे समान भक्त इन तीनों लोकों में कहीं भी नहीं होगा। इसी अज्ञान में आपके सामने मैंने कुछ अधिक ही बोल दिया! मुझे क्षमा करो! मेरे ही राज्य में, मेरे ही सामने रह रहे आपके प्रिय भक्त को मैंने आज देखा और मेरी आँखें खुल गयीं। यह

निम्नवर्गीय दम्पति ही इसका कारण है। अब हे भगवान! मुझे भी सद्गति प्रदान करो!' तोंडमान की वेदना को देखकर श्रीनिवास ने उस पर अपनी करुणा भरी दृष्टि फेरी। श्रीनिवास इतने सारे दिन, उसे अपना बंधू नहीं, उत्तम भक्त ही मानते रहे। तोंडमान पुष्करिणी में नहाया। श्रीविास की स्तुति की और देह को वहीं त्याग दिया। परमात्मा की दया के कारण उसने वहीं मुक्ति पायी। वराह, भविष्योत्तर तथा स्कान्द पुराणों में वर्णित श्रीनिवास की कलियुगीन लीलाओं का इस तरह हृदयंगम वर्णन कर पुराण व्याख्याकार महर्षि सूत ने शौनकादि मुनियों को संतुष्ट किया।

एवं हरिस्तत्र चरित्रमद्भुतं
कुर्वन जगन्मातृ समन्वितौ गिरौ
आस्ते जगत्यां च सुरौघ पूजितो
ददद्यधेष्ट च मनोरथान सताम।'

श्री कृष्णार्पणमस्तु!!!

* * *

पुनरावलोकन

वेंकटाद्रि समं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति!

परम पवित्र वेंकटाचल क्षेत्र की समता रखनेवाला क्षेत्र इस ब्रह्माण्ड में कोई और नहीं होगा। श्री वेंकटाचलपति से समानता रखने वाले देवता भी न भूत काल में थे और न भविष्य में रहेंगे।

कृत त्रेता द्वापर और कलियुग कितने बार भी आएँ-जाएँ, श्री वेंकटाचल तथा श्री वेंकटेश्वर स्वामी से समान देवता न रहेंगे।

मानव लोक के सकल पापों को दूर कर ऐश्वर्यामृत प्रदान करनेवाला दिव्य क्षेत्र है - श्री वेंकटाचल। इसमें अनेक पवित्र तथा प्रसिद्ध तीर्थ हैं। ये सब इस कलियुग के मानव के पापों को हरकर पवित्र बनाने के लिए ही बने हुए हैं। वेंकटाचल के आनंद निलय मंदिर में स्वर्ण विमान के नीचे श्री वेंकटेश स्वामी, लक्ष्मी, पद्मावती नामक अपनी दोनों पत्नियों को हृदय पर धरकर भक्तों को पावन दर्शन दे रहे हैं। हर भक्त जानता है कि अपने पास आ रहे भक्तों की मनोकामनाओं की पूर्ति कर रहे वेंकटाचलपति जैसे भगवान इस धरा पर कहीं भी नहीं रहेंगे।

पुराणों का कहना है कि कलियुग में प्रजा पाप कार्यों में अधिक दिलचस्पी रखती है। इस कारण प्रजा पाप कूपों में डूबकर मरेगी। इस विषय को जनते हुए भगवान वेंकटेश ने वैकुण्ठ में स्थित अपनी क्रीडाद्री को वेंकटाचल के नाम से सुवर्ण मुखी नदी के तीर पर गरुड़ द्वारा स्थापित करवाया।

भृगु महर्षि के कारण, लक्ष्मी देवी कोल्हापुर चली गयी और भगवान विष्णु वेंकटाचल पर एक वल्मीक में निवास करने लगे। लेकिन यह सब हमारी ही भलाई के लिए हुआ। कलियुग की बाधाओं से हमें तराने के लिए भगवान को यहाँ अवतरित होना पड़ा। भगवान को अपने भक्तों के प्रति जो प्रेम है, उसी के कारण ही यह सब हुआ। भक्तों की रक्षा में ही अधिक श्रद्धा रखनेवाले भगवान तो अपने भक्तों के लिए कुछ भी कर सकते हैं। लोह के स्तम्भ से नरसिंह बनकर निकलना, गोवर्धन गिरी को अपनी छोटी ऊँगली पर धरना आदि अनेक कार्यों से भगवान ने अपने भक्तों की रक्षा की है। इसी तरह यह सर्वसम्मत है कि कलियुग के पतितों की रक्षा हेतु, भगवान विष्णु अब तिरुमला पर श्री वेंकटेश्वर के रूप में विराजमान हैं।

ओल्गा तटों से आकर गंगा सिंधु नदी के मैदानों में निवास करनेवाले वे पुण्यात्मा, स्वार्थ रहित थे। 'सर्वे जनास्सुखिनो भवन्तु' कहते हुए भगवान की स्तुति करने वाले त्रिकाल वेदी थी। उनके द्वारा रचित शास्त्र पुराणादियाँ ही हमारी ज्ञान ज्योतियाँ हैं। उनका अनुसरण करने से ही उनके द्वारा प्रस्तावित सुधर्म पथ का अनुभव हमें होगा। संसार की सकल जनता में समानता की भावना आ जाएगी। सब में भाईचारे की भावना जन्मेगी। कलियुग की बाधाओं का सामना तभी हम धीरता से कर सकते हैं तथा हमारे जीवन सफल हो जायेंगे। हमारे तीनों आचार्यों ने इसी मार्ग को प्रतिपादित किये थे।

यह तो स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति ने प्राचीन काल से ही जात पांत के भेदों को न स्वीकारा। उसका मानना था कि इस धरा पर जीवित सभी मनुष्य, भगवान की संतान ही है। भगवान कहीं भी हो, उन सब की इच्छाओं की पूर्ति करते हुए उनकी रक्षा करता रहता है। इस लोक सम्मत भावना का आचरण और प्रचार ही ज्ञानियों का

धर्म है। सिंधु धर्म कहें, या हिन्दू धर्म, इस धर्म का अनुसरण ही हम भारतीयों का उत्तरदायित्व है। इस लक्ष्य के मार्ग ही ये सभी तीर्थ तथा क्षेत्र हैं। इस सारे संसार के सभी पुण्य क्षेत्रों में सर्वोत्कृष्ट है - तिरुमल क्षेत्र। वैकुण्ठ से श्री महा विष्णु के इस धरती पर आगमन का कारण था वेदवती को दिया गया उनका वचन। आकाश राजू को वेदवती, पद्मावती के रूप में प्राप्त हुई। श्रीनिवास से उसका विवाह संपन्न हुआ। उन दिनों का नारायण पुरम ही आज नारायण वनमु के नाम से आंध्र प्रदेश राज्य के तिरुपति जिले में है। आकाश राजू का छोटा भाई तोंडमान का राज्य, श्रीकालहस्ती के सामने तोंडमनाडु नाम से आज भी है। तोंडमान द्वारा निर्मित भवन तथा वेंकटाचलपति का मंदिर आज वहाँ नहीं हैं, फिर भी उनसे सम्बंधित अवशेष हैं।

तोंडमान ने श्रीनिवास के लिए मंदिर का निर्माण किया था। उसी का नाम है 'आनंद निलय।' उस मंदिर में श्रीनिवास जी, लक्ष्मी तथा पद्मावती को अपने हृदय पर धरकर अर्चा मूर्ति के रूप में अभी भी विद्यमान हैं। उनका दक्षिण हस्त चरण कमलों की तरफ इशारा करते हुए कहता है कि अपने भक्तों को वे चरण ही प्रश्रय देते हैं। वाम हस्त कटि प्रदेश में स्थित है। इसका अर्थ है अपने शरण में आये हुए भक्तों के लिए इस संसार की बाधाएँ मात्र घुटनों तक ही रह जाती हैं ताकि वे अनायास इन्हें पार कर सकें। शंख तथा चक्र आयुधों के साथ दिव्य दर्शन दे रहे स्वामी का क्षण मात्र दर्शन भी भक्तों को परमानंद का अनुभव अभी भी दे रहा है।

सर्व प्रथम श्रीनिवास की अनुमति से ब्रह्म देवता के द्वारा आयोजित ब्रह्मोत्सवों का निर्वाह आज भी उसी क्रम में हो रहा है। वेंकटाचलपति का निवास आनंद निलय ही भूलोक का वैकुण्ठ है। हर दिन उषोदय की वेला में सुप्रभात सेवा से लेकर रात एकांत सेवा तक

की अनेक सेवाएँ, वैखानस आगम के अनुसार हो रही हैं। हजारों भक्तों को श्रीनिवास अपने पावन दर्शन से अनुग्रहीत कर, उनकी बाधाओं को दूर कर रहे हैं। इसी कारण संसार भर की जनता तिरुमल क्षेत्र के बारे में अधिक जानने के लिए उत्सुक रहती है।

पुराणों में कहा गया है कि वेंकटाचल पर श्रीनिवास के हृदयतल पर लक्ष्मी देवी तथा पद्मावती दोनों विराजमान हैं। लेकिन पुराने ज़माने की एक जन श्रुति के अनुसार पद्मावती देवी, तिरुपति के पास के तिरुचानूर प्रांत के एक दिव्यालय में विराजमान हैं। वह जनश्रुति कुछ इस प्रकार है।

श्री वेंकटाचलपति तथा पद्मावती के विवाह के बाद अगस्त्य महामुनि ने कहा कि ब्याह के तुरंत बाद, नूतन वर और वधु को पहाड़ पर चढ़ना छः महीनों तक मना है। उनके आदेशानुसार उन्हीं के आश्रम के पास एक आश्रम का निर्माण कर, वहीं श्रीनिवास दम्पति छः महीनों तक रह गए। यही आज श्रीनिवास मंगपुराम नाम से प्रसिद्ध है। छः महीनों के बाद श्री वेंकटेश ने वेंकटाचल को जाना चाहा। श्वसुर आकाश राजू को खबर भेजी गयी। तब आकाश राजू ने अपनी प्रिय पुत्री के लिए अनेक अमूल्य उपहार भेजे। जैसे अमूल्य वस्त्राभरण, रसोई घर के लिए सारी सामग्री, दास दासी जन, दूध, दही, घी के घड़ों को ढोने के लिए सेवक आदि। सब लोग तिरुमल पहाड़ चढ़ने लगे। अव्वा कोना नामक प्रांत के पास पहुँच ही रहे थे कि श्रीनिवास जी ने पद्मावती से पूछा,' क्या, इस सामग्री में करी पत्ते हैं? पद्मावती ने कहा, 'नहीं।' श्रीनिवास ने कहा, 'करी पत्ते तो तिरुमल पहाड़ पर मिलते नहीं हैं। बिना इस पत्ते के व्यंजनों में वह स्वाद ही नहीं आता है। इसीलिए इस सभी सामान को यहीं रहने दो। तुम झट से अपने पिता के घर जाओ और करी पत्तों को सुखाकर

गठरी में बांधकर ले आना।' इस प्रकार करी के पत्तों के लिए पद्मावती को कुछ दिनों तक तिरुचानूर में रहना पड़ा।

इस कारण तिरुचानूर में कुछ दिन पद्मावती के रहने के कारण, आज भी यहाँ, पद्मावती के लिए हर कार्तिक महीने में उत्सव मनाये जाते हैं। अनेक भक्तजन इन उत्सवों में भी भाग लेते रहते हैं। तिरुमल पर भगवान श्री वेंकटेश्वर के दर्शन के बाद भक्त जन, तिरुचानूर जाकर पद्मावती मायी के भी दर्शन कर लेते हैं। वहाँ की पुष्करिणी में हर कार्तिक महीने में प्लवोत्सव का निर्वाह होता है।

संसार भर के भक्त तिरुमल यात्रा पर आते ही रहते हैं। इस कारण देवस्थानम के अधिकारीगण अनेक प्रबंध करते रहते हैं। भक्त जनों को शान्ति सुख प्रदान करने के लिए वेदांत के प्रवचन, हिन्दू धर्म के उद्धार के लिए भाषण, अन्नमाचार्य के संकीर्तन, सामाजिक कार्यक्रमादियों का निर्वाह आदि कराते हैं। अनेक आध्यात्मिक ग्रंथों का प्रकाशन किया जाता है। 'सप्तगिरि' नामक देवस्थानम की पत्रिका अनेक भाषाओं में प्रकाशित होती है। चाहे जिस किसी तरह भी इस क्षेत्र के बारे में कहा जाय तो मात्र सभी को मानना ही पड़ेगा कि शान्ति, सहन, सौजन्य, सौंदर्य, समैक्यता आदि गुणों से भगवान के अस्तित्व पर आस्था का अनुभव देनेवाला उत्तम क्षेत्र तथा केंद्र है यह तिरुमल!! इन सभी विषयों से जुड़ जाने के कारण, यह क्षेत्र सारे संसार में द्वितीय स्थान की मान्यता प्राप्त कर चुका क्षेत्र घोषित है। यहाँ की जन सम्बन्ध अधिकारी की शाखा सामाजिक संस्कृतिक विषयों से जुड़ी हुई है। प्रजा में आस्तिकता पर विश्वास बढ़ाने के लिए प्रकाशन विभाग तथा धर्म प्रचार विभाग - दोनों निरंतर सक्रिय होते ही हैं। निस्संदेह इसी कारण तिरुमल को यह गौरव सम्मान प्राप्त हुआ है।

तिरुमल तिरुपति की यात्रा पर आये हुए भक्तजन भगवान वेंकटेश्वर को विविध नामों से सम्बोधित करते रहते हैं, जैसे श्री वेंकटेशा! हे सप्त गिरीश! वेंकट रमणा! गोविंदा!! आपदबांधव स्वामी!! अनाथ रक्षक स्वामी!! ब्याज के सिक्केवाले स्वामी!! बालाजी!! अण्डवने! इत्यादि!

श्रियः कान्ताय कल्याण निधये निधयेर्थिनाम
श्री वेङ्कट निवासाय श्रीनिवासाय मङ्गलं
श्री वेंकटाद्रि निलयः कमला कामुकः पुमान
अभंगुर विभूतिर नः तरंगयतु मङ्गलं।

इति श्री श्रीनिवास पादारविन्द ध्यानामृतास्वादन मत्त चित्त, श्री ज्ञान प्रसुनाम्बिका सहित श्री कालहस्तीश्वरानुग्रह लब्ध कविता विशेष, श्री कैलास वास चिंतना मानस सरोवर विहार मराल मिथुन लक्ष्यार्थ, लक्ष्मी नरसांबा द्वितीय पुत्र श्री वेङ्कट कृष्णार्यानुज, बुध विधेय, गुंटकट्टा तिरुवेंगड सूरि नामधेय प्रणीत, तथा सरस्वती पुत्र उपाधि भाजमान, चतुर्दश भाषा कोविद श्रीमान पुट्टपर्ति नारायणाचार्यस्य पुत्री सुश्री नाग पद्मिनी द्वारा हिंदी भाषायां अनूदित तिरुमल तिरुपति क्षेत्र माहात्म्य नाम काव्ये द्वितीयाश्वासम् सम्पूर्णम!!!!

श्री श्रीनिवासार्पणमस्तु!!
यह श्री वेंकटेश्वर की है जीवनी,
इसे सुनने, पढ़ने या लिखने वाले बुद्धिमानों की
मनो वाँछाएँ होंगी अवश्य पूरी,
इह तथा पर लोकों में भी प्राप्त होगी मुक्ति!

* * *